तलाक़

अद्ल व इंसाफ़ पर मब्नी इस्लाम का एक मुस्तहकम क़ानून

मुफ़्ती ज़ैनुल इस्लाम साहब क़ास्मी इलाहाबादी

मुफ़्ती दारूल उलूम देवबन्द

और

तलाक़, खुला और इद्दत से मुतअल्लिक़
चन्द अहम और ज़रूरी मसाइल

इफ़ादात

हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी रह०

हस्बे ईमा

नमूनए सल्फ़ हज़रत मौलाना मुफ़्ती
अबुलक़ासिम साहब नोमानी

मुहतमिम दारूल उलूम देवबन्द

मकतबा दारूल उलूम देवबन्द

तफ़सील

नाम रिसाला हिस्सा अव्वल	:	तलाक़ः अद्ल और इंसाफ पर मब्नी इस्लाम का एक मुसतहकम क़ानून
नाम मुसन्निफ़	:	हज़रत मौलाना मुफ़्ती ज़ैनुल इस्लाम क़ास्मी इलाहाबादी (मुफ़्ती दारूल उलूम देवबन्द)
नाम रिसाला हिस्सा सानी	:	तलाक़, खुला और इद्दत से मुतअल्लिक़ चन्द अहम और ज़रूरी मसाइल
इफ़ादात	:	हकीमुलउम्मत ह. मौ. अशरफ़ अली थानवी रह0
तादाद	:	
क़ीमत	:	
नाशिर	:	**मकतबा दारूल उलूम देवबन्द**

हिस्सा अव्वल

अद्ल व इंसाफ़ पर मब्नी इस्लाम का एक मुसतहकम क़ानून

अज़्

हज़रत मौलाना मुफ़्ती ज़ैनुल इस्लाम क़ास्मी इलाहाबादी

मुफ़्ती दारूल उलूम देवबन्द

फ़ेहरिस्त हिस्सा अव्वल

तक़रीज़

हज़रत मौलाना अबुल क़ासिम साहब नोमानी

मुहतमिम दारूल उलूम देवबन्द

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

नहमदुहू व नुसल्ली अला रसूलिहिल करीमः

अम्मा बादः इस वक्त तलाक़ से मुतअ़ल्लिक़ फ़िकरी और अमली दोनों सतह पर मआ़शरे में क़िस्म क़िस्म की ग़लत फ़हमियां फैलाने की कोशिश की जा रही है और इस्लाम के आदिलाना निज़ामे तलाक़ को औरत पर ज़ुल्म की हैसियत से पेश किया जा रहा है, जो यक़ीनन ख़िलाफ़े वाक़िआ है।

तलाक़ इस्लाम का अद्ल व इंसाफ़ पर मब्नी एक मुस्तहकम क़ानून है, इंसान की दुन्यवी ज़िन्दगी पर इसके मुसबत और गहरे नताइज व असरात मुरत्तब होते हैं, अगर इस क़ानून को शरिअ़ते इस्लामी की तालीमात व हिदायात का पाबंद बन कर बरता जाए तो यक़ीनन यह क़ानून रहमत ही रहमत है, दूसरी तरफ़ हमारे मुस्लिम मआ़शरे में तलाक़ के अहम और ज़रूरी मसाइल से नावाक़फ़ियत पाई जा रही है, अवामुन्नास हों या ख़्वास का तब्क़ा, दोनों को तलाक़ जैसे अहम इस्लामी क़ानून के ज़रूरी मसाइल का भी इल्म नहीं है, एक बड़ा तबक़ा यह समझे हुए है कि शरीयते इस्लामी में रिश्त-ए-निकाह सिर्फ़ तीन तलाक़ ही से ख़त्म होता है, हालांकि यह बात क़तअन ग़लत है। इधर चन्द महीनों से सख़्त ज़रूरत महसूस की जा रही थी कि आम फ़ह्म अन्दाज़ मे एक ऐसा रिसाला मुरत्तब कर दिया जाए, जिसमें मज़कूरह दोनों पहलुओं को वाज़ेह किया गया हो, अल्लाह तआ़ला जज़ाए ख़ैर अता फ़रमाए दारूल उलूम देवबन्द के मुफ़्ती

जनाब मौलाना मुफ़्ती ज़ैनुल इस्लाम साहब क़ासमी इलाहाबादी को कि मौसूफ़ ने इस ज़रूरत का बरवक़्त इदराक करके यह क़ीमती रिसाला आसान ज़बान में मुरत्तब कर दिया, रिसाला का पहला हिस्सा इस्लाम के निज़ामे तलाक़ की बुन्यादी और ज़रूरी बातों पर मुश्तमिल है, जबकि दूसरा हिस्सा तलाक़, खुला और इद्दत वग़ैरह के ज़रूरी मसाइल पर मुश्तमिल है, मुफ़्तीसाहब ने एहतियात बरत्ते हुए ज़रूरी मसाइल हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी रह0 के इफ़ादात पर मुश्तमिल''तसहील बहिश्ती ज़ेवर'' से अख़्ज़ किए हैं।

यह रिसाला दारूल उलूम देवबन्द के मुअक़्क़र अराकीन मजलिसे शूरा की इजाज़त के बाद मकतबा दारूल उलूम से छप रहा है। अल्लाह तआला इस रिसाले को नाफ़े बनाए और इसके फ़ाइदे को आम व ताम फ़रमाए।आमीन।

अबुलक़ासिम नोमानी
मुहतमिम दारूल उलूम देवबन्द
20-2-38 हि0

हर्फ़े अव्वलीं

हज़रत मौलाना मुफ़्ती ज़ैनुल इस्लाम क़ासमी इलाहाबादी
मुफ़्ती दारूल उलूम देवबन्द

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

नहमदुहू व नुसल्ली अ़ला रसूलिहिल करीम

अल्लाह तआ़ला ने कुरआने करीम में इरशाद फ़रमाया है: "فَجَعَلَهُ نَسَبًا وَصِهْرًا" यानी अल्लाह तआ़ला ने दो क़िस्म के रिश्ते अता फ़रमाकर बन्दों पर एहसान फ़रमाया है, एक नसबी रिश्ता मसलनः माँ, बाप, भाई, बहन, ख़ाला, मामू, चचा, फूफी वग़ैरह और दूसरा ससुराली रिश्ता यानी शौहर, बीवी, सास, ससुर वग़ैरह का रिश्ता, पहला रिश्ता अल्लाह की तरफ़ से तय शुदा है इसमें बन्दों के इख़्तियार का कोई दख़ल नहीं है न वह अपनी मरज़ी से इन रिश्तों को क़ाइम कर सकते हैं और न बदल सकते हैं। अलबत्ता दूसरे रिश्ते को जोड़ने, क़ाइम करने और ख़त्म करने का इख़्तियार इंसान को दिया गया है कि मुहर्रमात के अलावा जहां चाहे ससुराली रिश्ता क़ाइम कर ले और रिश्ते को क़ाइम करने के बाद अगर हालात नामुवाफ़िक़ हो जाएं और शौहर बीवी के लिए एक दूसरे के शरई हुक़ूक़ अदा करना मुश्किल हो जाए, और इस्लाह की सारी कोशिश नाकाम हो जाए, तो शरई तालीमात का पाबंद बन कर मियाँ-बीवी इस रिश्ते को ख़त्म भी कर सकते हैं, शौहर तलाक़ के ज़रिए और बीवी शौहर की रज़ामंदी से खुला लेकर। गोया तलाक़ इज़्दिवाजी रिश्ते को बवक़्त ज़रूरत ख़त्म करने का नाम है। यह इस्लाम का एक आदिलाना निज़ाम है जो बहुत सी हिक्मतों और मस्लिहतों का जामेअ़ है, लेकिन अफ़सोस कि बाज़ लोग इस्लाम के इस क़ानून को ग़लत तरीक़ा पर पेश करने की कोशिशों में मसरूफ़ हैं, वह यह साबित करना चाहते हैं कि तलाक़ का क़ानून औरत के हक़ में ग़ैर मुफ़ीद, बल्कि नऊज़ुबिल्लाह उसके

हुकूक़ को पामाल करने वाला है, नीज़ हमारे बहुत से मुसलमान भाई भी इस क़ानून की ज़रूरी तफ़सीलात से नावाक़िफ़; बल्कि बहुत से मसाइल के हवाला से ग़लत फ़हमी का शिकार हैं। इसलिए ज़रूरत महसूस हुई कि इस्लाम के क़ानूने तलाक़ की हक़ीक़त, हिकमत और तलाक़ का तदरीजी और इहतियात पर मब्नी तरीक़ा कार आसान ज़बान में पेश कर दिया जाए, नीज़ हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी रह0 के इफ़ादात पर मुश्तमिल ''तसहील बहिश्ती ज़ेवर'' में से तलाक़, खुला और इद्दत के ज़रूरी मसाइल भी मुरत्तब कर दिए जाऐं। पशे नज़र रिसाले में इसी ज़रूरत की तकमील की कोशिश की गई है, अल्लाह तआ़ला से दुआ है कि इस काविश को कुबूल फ़रमा कर लोगों के लिए नाफ़े बनाए और इस्लाम के क़ानूने तलाक़ को सही समझने में इसको मुआ़विन बनाए।

फ़क़त

ख़ाक पाए दरवेशाँ

ज़ैनुल इस्लाम क़ासमी इलाहाबादी

मुफ़्ती दारूल उलूम देवबन्द

20-2-38 हि0

इस्लाम की नज़र में :
''निकाह'' एक पाइदार मुआ़हिदा

यह एक हक़ीक़त है कि निकाहे शरई इन्सानियत की बक़ा और सही निज़ामे ज़िन्दगी के लिए एक अज़ीम नेअ़मत है इसके ज़रिए जहां एक तरफ़ इन्सान की फ़ितरी ज़रूरत की तकमील होती है और दुनिया में तवालुद व तनासुल का तबई और पाकीज़ा निज़ाम क़ाइम होता है, वहीं दूसरी तरफ़ यह बजाए ख़ुद एक इबादत और तमाम अंबिया अलैहिमुस्सलाम की मुशतरिका सुन्नत है।

शरीअ़ते इस्लाम ने इस इबादत से मुतअ़ल्लिक़ जो तालीमात और हिदायात दी हैं, उनकी रू से एक मर्द पर औरत के लिए हक़्क़े महर, नान व नफ़क़ा और दीगर ज़रूरियात का ख़्याल रखना नीज़ हुस्ने मुआ़शरत ज़रूरी है जब कि औरत की तरफ़ से इफ़्फ़त व पाक दामनी, नेक चलनी और शौहर की इताअ़त व फ़रमांबरदारी शर्त क़रार दी गई है, इस लिए कि इस्लाम की नज़र में निकाह कोई वक़्ती और महदूद मुआ़हिदे का नाम नहीं है, बल्कि यह एक ऐसा मज़बूत शरई अ़ह्द और बंधन है जिसका हमेशा बाक़ी रखना मतलूब और पसंदीदा है। लिहाज़ा जो चीज़ भी इस मुआ़हिदे के दवाम और बक़ा में रूकावट बन सकती है, शरीअ़त ने उस पर मुतनब्बेह कर के मियाँ-बीवी को ख़ास अहकामात दिए हैं, चुनान्चे दोनों को एक दूसरे के शरई हुक़ूक़ अदा करने की सख़्त ताकीद की गई है, मर्दो को मुख़ातब बनाकर अल्लाह तआ़ला ने इरशाद फ़रमाया:

وَعَاشِرُوْهُنَّ بِالْمَعْرُوْفِ فَاِنْ كَرِهْتُمُوْهُنَّ فَعَسٰى اَنْ تَكْرَهُوْا شَيْئًا وَّيَجْعَلَ اللّٰهُ فِيْهِ خَيْرًا كَثِيْرًا (النساء:١٩)

तर्जुमा: ''उन औरतों के साथ अच्छी गुज़र बसर करो और अगर वह तुमको नापसंद हों तो मुमकिन है कि तुम एक चीज़ को नापसंद करो और ख़ुदा उसके अन्दर कोई बड़ा फ़ाइदा रखदे''।

हुज़ूर सल्ल0 का इरशाद है:

اِسۡتَوۡصُوۡا بِالنِّسَاءِ خَيۡرًا، فَاِنَّهُنَّ خُلِقۡنَ مِنۡ ضلع، وَإِنۡ أَعۡوَجَ شیءٍ فی الضّلع أعلاه، فإن ذَهَبتَ تُقِيمُهُ، كسرته، وإن تَرَكتَهُ، لم يزل اعوج، فاستوصُوا بالنِّساء (متفق عليه)

तर्जुमा: ''औरतों के साथ भलाई का मआ़मला करो, इसलिए कि उन की पैदाइश मर्द की पसली से हुई है और पसली में ऊपर का हिस्सा सबसे ज़्यादा टेढ़ा होता है और अगर तुम उसे सीधा करना चाहो, तो टूट जाएगी और अगर छोड़ दोगे, तो टेढ़ी ही रह जाएगी, इसलिए औरतों के साथ भलाई से पेश आओ''।

मज़कूरह आयत व हदीस में मर्दों पर औरतों के हुक़ूक़, उनके साथ हमदर्दी और हुस्ने सुलूक का ताकीदी हुक्म वाज़ेह है। दूसरी तरफ़ औरतों को भी मर्दों के हुक़ूक़ अदा करने, ख़ास तौर पर शौहर की इताअ़त व फ़रमां बरदारी और इफ़्फ़त व पाकदामनी के बारे में सख़्त ताकीदात की गई हैं और जो औरत इन सिफ़ात के साथ मुत्तसिफ़ हो, उसके फ़ज़ाइल भी बयान किए गए हैं। मसलन एक हदीस में है:

''मोमिन बन्दा ख़ुदा के डर और परहेज़गारी के बाद जो सबसे बेहतर चीज़ हासिल करता है, वह नेक ख़सलत बीवी है कि अगर वह उसे हुक्म देता है, तो मानती और फ़रमांबरदारी करती है, उसको देखता है, तो उसे ख़ुशी और मुसर्रत होती है, अगर उसपर कोई क़सम खाता है, तो उसे पूरा करती है और अगर शौहर कहीं चला जाता है, तो उसके ग़ाइबाना में अपनी जान, इज़्ज़त और शौहर के माल की हिफ़ाज़त करती है''। (मिश्कात)

तलाक़ से मुतअ़ल्लिक़ शरीअ़त की अस्ल मंशा

मज़्कूरह तफ़सीलात से यह बात बख़ूबी वाज़ेह हो गई कि निकाह एक शरई पाइदार मुआ़हिदा है; लिहाज़ा सख़्त ज़रूरत के बग़ैर उसको ख़त्म करना या ख़त्म करने का मुतालबा करना इस्लाम में नाजाइज़ व ममनूअ़ और निकाह के बुन्यादी मक़सद और इस्लामी मंशा के ख़िलाफ़ है, इसी मुआ़हिदे को ख़त्म करने का नाम दूसरे लफ़्ज़ों में ''तलाक़'' है। अहादीस में बिला ज़रूरत इसका इक़दाम करने पर नापसंदीदगी ज़ाहिर की गई है, एक हदीस में है:

> ''अल्लाह के नज़दीक हलाल चीज़ों में सब से ज़्यादा नापसंदीदा चीज़ तलाक़ है''।

हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी रह0 ने इस हदीस के ज़िम्न में फ़रमाया:

> ''मतलब यह है कि तलाक़ ज़रूरत के तहत जाइज़ रखी गई है। बग़ैर ज़रूरत तलाक़ देना बहुत बुरी बात है, इसलिए कि निकाह तो आपस में उलफ़त व मुहब्बत और मियाँ-बीवी की राहत के लिए होता है और तलाक़ से इन नेक मक़ासिद का रास्ता बंद हो जाता है और अल्लाह तआ़ला की नेअ़मत की नाशुकरी होती है, दोनों को परेशानी होती है, आपस में दुशमनी होती है, नीज़ उसकी वजह से बीवी के रिश्तेदारों से भी दुशमनी पैदा हो जाती है, जहाँ तक हो सके हरगिज़ ऐसा नहीं करना चाहिए, मियाँ-बीवी को एक दूसरे को बरदाश्त करना चाहिए और प्यार-मुहब्बत से रहना चाहिए।
> (बहिश्ती ज़ेवर)

एक रिवायत में है:

أيما امرأة سألت زوجها طلاقا في غير ما بأس، فحرام عليها رائحة الجنة (ابوداؤد)

> ''जो औरत सख़्त मजबूरी के बग़ैर ख़ुद तलाक़ तलब करे, उस पर जन्नत की ख़ुश्बू हराम है''।

इसी तरह एक लम्बी हदीस में इरशाद है:

> ''शैतान अपने तख़्त को पानी पर बिछाता है, फिर लोगों को गुमराह करने के लिए अपने लशकरों को भेजता है, उन लश्कर वालों में से रूतबे के ऐतिबार से शैतान के सबसे ज़्यादा क़रीब वह शख़्स होता है, जो उन में सबसे ज़्यादा फ़ित्ना बाज़ हो, यानी: सब से ज़्यादा पसंदीदा वह चेला होता है, जो सबसे ज़ियादा फ़ित्ना बरपा करे, उन में से एक आकर कहता है: मैंने यह फ़ित्ना बरपा किया और यह फ़ित्ना बरपा किया, शैतान कहता है: तूने कोई बड़ा काम नहीं किया, एक आकर कहता है: मैंने फ़लां शख़्स को उस वक़्त तक नहीं छोड़ा यहां तक कि मैंने उसके और उसकी बीवी के दरमियान जुदाई करादी, तो शैतान उसको अपने क़रीब कर लेता है और अपने गले से लगा कर कहता है ''हाँ तूने बहुत बड़ा काम किया''।

ख़ुलास-ए-तहरीर यह है कि तलाक़ इस्लाम की नज़र में फ़ी नफसिही मबग़ूज़ और नापसंदीदा अमल है, बिला ज़रूरत इसका इरतिकाब करना अर्शे इलाही को हिलाना और शैतान को ख़ुश करना है और औरत का बिला ज़रूरत तलाक़ का मुतालबा जन्नत की ख़ुशबू से महरूमी का सबब है।

मियाँ-बीवी के नाखुशगवार हालात में इस्लाम की तालीमात व हिदायात

इससे पहले यह बात वज़ाहत के साथ आ चुकी है कि निकाह एक दाइमी रिश्ते का नाम है, इस्लाम का अस्ल मंशा इस रिश्ते को बाक़ी और क़ाइम रखना है, इसी लिए बिला ज़रूरत इस रिश्ते को तोड़ने की सख़्त मज़म्मत बयान की जा चुकी है, लेकिन यह भी एक हक़ीक़त है कि बसा औक़ात मियाँ-बीवी के दरमियान हालात ख़ुशगवार नहीं रहते, आपसी ना इत्तेफ़ाक़ियां पैदा हो जाती हैं, दोनों में निभाव मुश्किल हो जाता है। ऐसी सूरत में भी इस्लाम ने जज़्बात से मग़लूब हो कर जल्द बाज़ी में फ़ौरन ही इस पाकीज़ा रिश्ते को ख़त्म करने की इजाज़त नहीं दी बल्कि मियाँ-बीवी दोनों को मुकल्लफ़ बनाया कि वह हत्तल इमकान इस बंधन को टूटने से बचाएं, चुनान्चे औरत की तरफ़ से नाफ़रमानी की सूरत में मर्दों को यह तालीम दी गई है:

وَالَّتِی تَخَافُوْنَ نُشُوْزَهُنَّ فَعِظُوْهُنَّ وَاهْجُرُوْهُنَّ فِی الْمَضَاجِعِ وَاضْرِبُوْهُنَّ فَإِنْ أَطَعْنَكُمْ فَلَا تَبْغُوْا عَلَيْهِنَّ سَبِيْلًا (النساء)

इस आयत के ज़रिए क़ुरआन ने आपसी ख़लफ़िशार और इन्तिशार को ख़त्म करने के तीन तरीक़े बयान किए हैं:

- अगर औरत की नाफरमानी का ख़तरा हो तो हिक्मत और नरमी के साथ पहले उसको समझाने की कोशिश की जाए।
- अगर समझाना मुअस्सिर न हो तो आरज़ी तौर पर उसका बिस्तर अलग कर दिया जाए।
- अगर दूसरी सूरत भी मुफ़ीद साबित न हो और औरत अपनी आदत पर क़ाइम रहे तो कुछ डांट डपट और हल्के दर्जे की सरज़निश से काम लिया जाए।

जब की मर्दों की तरफ़ से किसी क़िस्म की बदसुलकी के वक़्त औरतों को यह हिदायत है:

وَإِنِ امْرَأَةٌ خَافَتْ مِنْ بَعْلِهَا نُشُوزًا وَإِعْرَاضًا فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَا أَنْ يُصْلِحَا بَيْنَهُمَا صُلْحًا ۔(النساء)

''किसी औरत को अगर अपने शौहर की बदसुलूकी से डर या उसकी बेऐतिनाई से शिकायत हो, तो मियाँ-बीवी के लिए इस बात में कोई गुनाह नहीं कि वह आपस में एक ख़ास तौर पर सुलह करलें''।

हज़रत हकीमुल उम्मत मौलाना अशरफ़ अली थानवी क़ुदिद्स सिर्रहू इस आयत के तहत फ़रमाते हैं यानी औरत अगर ऐसे शौहर के पास रहना चाहे जो पूरे हुक़ूक़ अदा करना नहीं चाहता और इसलिए उसको छोड़ना चाहता है तो औरत को जाइज़ है कि अपने कुछ हुक़ूक़ छोड़ दे मसलन नान व नफ़क़ा माफ़ कर दे या मिक़दार कम कर दे ताकि वह छोड़े नहीं। और शौहर को भी जाइज़ है कि उस माफ़ी को क़ुबूल करले। अगर इस से भी मामला हल न हो और ख़ुदा ना ख़्वास्ता आपस के तअ़ल्लुक़ात बहुत ही ख़राब हो जाएं। फिर भी शरीअ़त ने रिश्त-ए-निकाह तोड़ने की इजाज़त नहीं दी; बल्कि यह हुक्म दिया कि मियाँ-बीवी दोनों अपनी तरफ़ से एक एक ऐसा हकम(पंच) और सालिस मुक़र्रर कर लें, जो मुख़लिस और ख़ैर ख़्वाह हो, जिन का मक़सद इख़तिलाफ़ को ख़त्म कराना हो। इस लिए दोनों हकम पूरी ईमानदारी और इंसाफ़ के साथ इख़तिलाफ़ का जाइज़ा लें और दोनों के दरमियान सुलह कराने की कोशिश करें। इरशादे बारी है:

وَإِنْ خِفْتُمْ شِقَاقَ بَيْنِهِمَا فَابْعَثُوا حَكَمًا مِنْ أَهْلِهِ وَحَكَمًا مِنْ أَهْلِهَا ۔(النساء)

मज़कूरह तफ़सील से यह बात भी मालूम हुई कि मियाँ-बीवी के दरमियान नाइत्तिफ़ाक़ी और ना ख़ुशगवार हालात के मसअले का इबतिदाई हल तलाक़ देना नहीं है बल्कि इख़तिलाफ़ के असबाब को तलाश कर के उस पर रोक लगाना है।

तलाक़ :

नामुवाफ़िक़ हालात में ग़लत इक़्दाम से बचने का वाहिद हल

सुलह व सफ़ाई की मज़्कूरह तमाम सूरतो को इख़्तियार करने के बाद भी मुमकिन है कि हालात क़ाबू में न आएं और दोनों में मुआफ़िक़त और निभाव की कोई सूरत बाक़ी न रह जाए, ज़ौजैन में बाहम ऐतिमाद ख़त्म हो जाए और अल्लाह तआ़ला के क़ाइम करदा हुदूद व अहकाम को पूरा करना मुश्किल हो जाए तो ऐसी आख़िरी हालत में भी मुआ़हिद-ए-निकाह के बरक़रार रखने पर मजबूर करना ज़ाहिर है कि दोनों पर ज़ुल्म है, ऐसी सूरत में उनकी ज़िन्दगी तंगी व परेशानी का बदतरीन नमूना बन जाएगी, जिस के नतीजे में क़ाबिले नफ़रत घिनाउनी और नापसंदीदा हरकतों के सादिर होने का इमकान है, नीज़ इसमें ख़ानदानी फ़वाइद के बजाए सैकड़ों मुसीबतें और मज़र्रतें हैं।

इस्लाम की नज़र में तलाक़ अगरचे एक नागवार और नापसंदीदा अमल है; लेकिन ऐसे हालात में भी अगर तलाक़ की बिल्कुल मुमानिअ़त कर दी जाए तो यह निकाह दोनों के लिए सख़्त फ़ितना और परेशानी का सबब बन जाएगा। लेहाज़ा ऐसी मजबूरी में शरीअ़ते इस्लामी ने तलाक़ की गुन्जाइश दी है। क्योंकि निकाह के बाद पैदा होने वाली मुश्किलात और सख़्त दुश्वारी व तंगी की हालत से निकलने का पुर अमन और पुर सुकून रास्ता सिर्फ़ तलाक़ है, इसका कोई मुतबादिल नहीं है। शरीअ़ते इस्लामी की तरफ़ से ऐसे हालात में तलाक़ रहमत पर मब्नी एक क़ानून है, जिसमें मर्द को इजाज़त है कि वह बीवी को तलाक़ देकर दूसरी औरत से निकाह कर ले, इसी तरह औरत भी निकाह से आज़ाद हो कर चाहे तो दूसरी जगह अपना निकाह कर ले।

तलाक़ देने का सही और अहसन तरीक़ा

जब हालात यहां तक पहुंच जाएं कि तलाक़ देने ही में शौहर और बीवी दोनों के लिए राहत हो, इसके बग़ैर दोनों के लिए ख़ुशगवार ज़िन्दगी गुज़ारना मुमकिन न हो तो ऐसी हालत में भी शरीअ़त ने मर्द को आज़ाद नहीं छोड़ा कि जिस तरह चाहे और जितनी चाहे तलाक़ देदे; बल्कि उसके हुदूद और ज़ाबते तय किए, जिन से इस्लाम के क़वानीन की जामिइय्यत और उनका ऐन फ़ितरत के मुताबिक़ होना ख़ूब वाज़ेह होता है।

चुनान्चे तलाक़ देने का सही और अहसन तरीक़ा यह है कि:

(1) बीवी को साफ़ लफ़्ज़ों में सिर्फ़ एक तलाक़ दी जाए, शौहर बीवी सेक हे ''मैंने तुझे तलाक़ दी''।

(2) तलाक़ उस वक़्त दी जाए जब औरत पाक हो यानी: उसको माहवारी न आ रही हो और उस पाकी के ज़माने में सुहबत न की गई हो; क्योंकि माहवारी के दौरान तलाक़ देना गुनाह है और अगर सुहबत करने के बाद तलाक़ दी जाएगी तो मुमकिन है हमल ठहर जाने की वजह से उसकी इद्दत लम्बी हो जाए, जो औरत के लिए मशक़्क़त और परेशानी का सबब है।

तलाक़ देने का सबसे बेहतर तरीक़ा यही है, अगर लोग तलाक़ देने के इस तरीक़े को इख़्तियार करें तो तलाक़ की वजह से पेश आने वाले मसाइल पैदा न हों। इसलिए कि आमतौर पर वक़्ती तकलीफ़ और आरज़ी इख़्तिलाफ़ की वजह से ग़ुस्से में आदमी तलाक़ दे डालता है; लेकिन बाद में दोनों को इस का शदीद एहसास होता है और तलाक़ के बावुजूद एक दूसरे की मुहब्बत में कोई कमी पैदा नहीं होती बल्कि पहले से ज़्यादा उसमें इज़ाफ़ा हो जाता है; फिर दोनों परेशान होते हैं और दोबारा इज़्दिवाजी ज़िन्दगी क़ाइम करना चाहते हैं, दोनों के ख़ानदान वालों की भी यही ख़्वाहिश रहती है और अगर सोच समझ कर तलाक़

दी गई हो तो भी मज़कूरह तरीक़े के ख़िलाफ़ इख़्तियार करने में मुख़्तलिफ़ क़िस्म की परेशानियां पेश आती हैं।

इन दुशवारियों का हल यही है कि बदर्जा मजबूरी सिर्फ़ एक तलाक़ दी जाए इसलिए कि एक तलाक़ देने की सूरत में शौहर के लिए इद्दत के अन्दर अन्दर ही रूजु (यानी दोबारा निकाह के बग़ैर बीवी को अपने निकाह में वापस लेने) का इख़्तियार रहता है।

और अगर शौहर ने इद्दत के अन्दर अन्दर रूजु नहीं किया तो इद्दत गुज़रने के बाद बीवी अगरचे उसके निकाह से निकल जाती है लेकिन दोनों के लिए एक दूसरे के साथ नए सिरे से दोबारा निकाह करने की गुंजाइश रहती है। इस सूरत में हलाला शरई शर्त नहीं है।

इस्लाम में तीन तलाक़ क्यों और कैसे?

इससे पहले तलाक़ देने का सब से बेहतर और अफ़ज़ल तरीक़ा बयान किया जा चुका है कि मजबूरी और सख़्त ज़रूरत के वक़्त बीवी की पाकी की हालत में जिसमें उसके साथ सुहबत न की हो सरीह लफ़्ज़ों में एक तलाक़ देनी चाहिए।

लेकिन बसा औक़ात आदमी तीन तलाक दे कर रिश्त-ए-निकाह इस तरह ख़त्म करना चाहता है कि उसके लिए रूजु औरत जदीद निकाह का मौक़ा आइंदा बाक़ी न रहे।

ऐसी सूरत में शरीअ़ते इस्लामी की तालीम यह है कि एक बारगी तीन तलाक़ न दी जाए बल्कि पाकी की हालत में एक तलाक़ देकर ग़ौर व फ़िक्र किया जाए। अगर हालात सही न हो सकें:

तो एक माहवारी गुज़रने के बाद दूसरी पाकी की हालत में दूसरी तलाक़ दे दी जाए। फिर ग़ौर किया जाए।

अगर अब भी हालात क़ाबू में न आ सकें और तीसरी तलाक़ दे कर रिश्त-ए-निकाह को बिल्कुल ख़त्म करने ही में दुन्या और आख़िरत की भलाई नज़र आए तो दूसरी माहवारी गुज़रने के बाद तीसरी पाकी की हालत में तीसरी तलाक़ दे दी जाए। इसके बाद रिश्त-ए-निकाह बिल्कुल ख़त्म हो जाएगा। अब मर्द और औरत दोनों एक दूसरे के लिए हराम हो जाएंगे और दोनों के लिए आपस में दोबारा निकाह करना उसी सूरत में मुमकिन हो सके गा जब कि मुतल्लक़ा बीवी इद्दत के बाद किसी दूसरे मर्द से निकाह करले और दूसरा मर्द सुहबत भी करले फिर या तो बक़ज़ाए इलाही इन्तिक़ाल कर जाए या तलाक़ देदे, ऐसी सूरत में दोबारा इद्दत गुज़ारने के बाद ही निकाह की गुंजाइश निकल सकेगी, इस के बग़ैर इज़दिवाजी तअ़ल्लुक़ क़ाइम करने की कोई शक्ल न होगी।

शरीअ़ते इस्लामी ने तीन तलाक़ के बाद इज़दिवाजी तअ़ल्लुक़ बिल्कुल ख़त्म कर दिया और रजअ़त का हक़ नहीं दिया। अगर तीन तलाक़ के बाद भी रजअ़त का हक़ दे दिया जाए तो तलाक़ का मक़सद ही फ़ौत हो जाएगा और इस्लाम का निज़ामे तलाक़ मियाँ-बीवी की आ़फ़ियत के बजाए वबाले जान और मुसीबत बन जाएगा।

चुनान्चे इस्लाम से पहले और इस्लाम के शुरू ज़माने में यह दसतूर था कि अगर कोई शख़्स अपनी बीवी को दस्यों तलाक़ दे देता, तो भी इद्दत के अन्दर अन्दर बहरहाल उसे रजअ़त का हक़ हासिल रहता, जिस की वजह से औ़रत की ज़िन्दगी अजीरन बन जाती थी।

इसी तरह दौरे नबवी में एक वाक़िआ़ यह पेश आया कि एक शख़्स अपनी बीवी से नाराज़ हो गया और उससे यह कह दिया कि न तो मैं तुझे रखूंगा और न ही तुझे अलग होने दूंगा, बीवी ने पूछा कि वह किस तरह? उसने कहा कि तुझे तलाक़ देता रहूंगा और इद्दत पूरी होने से पहले रूजू करता रहूंगा, तो उस औरत ने जनाब रसूलुल्लाह सल्ल० से यह वाक़िआ़ बयान किया, जिस पर यह आयते करीमा: الطَّلَاقُ مَرَّتَانِ...الآية नाज़िल हुई जिस के ज़रिए औरत के इस्तिहसाल और उस पर होने वाले ज़ुल्म का दरवाज़ा बंद कर दिया गया और शौहर को ताकीद कर दी गई कि या तो अच्छी तरह बीवी को रखे या फिर अच्छे अन्दाज़

से उसे छोड़ दे, अल्बत्ता पहली और दूसरी तलाक़ के बाद रजअ़त का हक़ दिया गया ताकि आदमी अगर चाहे तो अपने नुक़सान की तलाफ़ी कर सके और तीन तलाक़ के बाद हलाला के बग़ैर रिश्त-ए-ज़ौजियत क़ाइम करना ममनूअ़ क़रार दिया गया, ताकि लोग तलाक़ को मज़ाक़ न बना लें।

इस्लाम में तीन तलाक़ देने का यह अस्ल और बेहतर तरीक़ा है, इस तरीक़े में अगर ग़ौर किया जाए तो यह बात साफ़ हो जाएगी कि इस्लाम का निज़ामें तलाक़ कितनी गहराई और मसालेह पर मब्नी है। रिश्त-ए-निकाह को पूरी तरह से ख़त्म करने के लिए इस्लाम ने कम व बेश तीन महीने की लम्बी मुद्दत ग़ौरो फ़िक्र करने की तालीम दी है, ताकि मुकम्मल इन्शिराह और बसीरत के साथ फ़ैसला लिया जा सके। इतने बड़े और आख़िरी फ़ैसले के लिए ज़ाहिर है कि ऐसा वक़्फ़ा होना चाहिए जिसमें आदमी की ज़िन्दगी मामूल पर आ जाए, वक़्ती हालात और मसाइल का तअस्सुर ख़त्म हो जाए और मुख़्लिसीन और बड़ों से मशवरा और मुज़ाकरा के बाद कोई क़दम उठाया जा सके।

एक साथ तीन तलाक़ देना एक बड़ा गुनाह

अगर कोई शख़्स तलाक़ से मुतअ़ल्लिक़ इससे क़ब्ल में बयान की हुई इस्लाम की मुस्तहकम तालीमात को नज़र अन्दाज़ कर के एकबारगी तीन तलाक़ का इक़दाम करे (जैसा कि आज कल बिलउमूम ऐसा ही होता है) तो यह बात समझ लेनी चाहिए कि शरीअ़ते इस्लामी की निगाह में यह बहुत बड़ा जुर्म और गुनाह है, ऐसा शख़्स सख़्त गुनहगार होता है।

एक हदीस में है कि:

हुज़ूर सल्ल0 को एक शख़्स के मुतअ़ल्लिक इत्तिला मिली कि उसने अपनी बीवी को एक साथ तीन तलाक़ें दे दी हैं, तो यह सुन

कर आप सल्ल0 ग़ुस्से में खड़े हो गए और फ़रमाया कि क्या मेरी मौजूदगी में अल्लाह की किताब के साथ खेल किया जाएगा? (निसाई)

इसी तरह:

एक शख़्स ने हुज़ूर सल्ल0 से अर्ज़ किया कि मेरे वालिद ने मेरी वालिदा को एक हज़ार तलाक़ें दे दी हैं अब कोई रास्ता है या नहीं? आपने इरशाद फ़रमाया कि अगर तुम्हारे वालिद ख़ुदा से डरते, तो अल्लाह उसके लिए रास्ता निकालता, अब तो बीवी तीन तलाक़ों से बाइना हो गई।

एक शख़्स ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ि0 से कहा कि मेरे चचा ने अपनी बीवी को तीन तलाक़ें दे दी हैं। हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि0 ने फ़रमाया कि तेरे चचा ने अल्लाह की नाफ़रमानी करके गुनाह का काम किया और शैतान की पैरवी की। (तहावी)

मज़कूरह अहादीस से मालूम हुआ कि तीन तलाक़ें एक साथ देना शैतानी अमल और गुनाह का काम है, इसलिए एक मुसलमान को तीन तलाक़ हरग़िज नहीं देनी चाहिए; लेकिन अगर किसी ने शरीअ़त के हुक्म को नज़र अन्दाज़ करते हुए एक मजलिस में तीन तलाक़ें दे दीं, तो तीन तलाक़ बिला शुब्हा वाक़ेअ़ हो जाएगी, यह भी शरीअ़त का एक मुत्तफ़क़ अ़लैह हुक्म है,

''जम्हूर उलमाए ख़ल्फ़ व सल्फ़, ताबिईन, तबएताबिईन, इमाम अबू हनीफ़ा रह0 और उनके असहाब, इमाम मालिक रह0 और उनके असहाब, इमाम शाफ़िई रह0 और उनके असहाब, इमाम अहमद रह0 और उनके असहाब, जमहूर फ़ुक़हाए किराम, मुहद्दिसीने इज़ाम वग़ैरह का यही मसलक है कि जो शख़्स अपनी बीवी को तीन तलाक़ देदे, तो तीनों तलाकें वाक़ेअ हो जाएंगी; अलबत्ता उसकी वजह से वह गुनहगार भी होगा''।

तलाक़ का हक़ सिर्फ़ मर्दों ही को क्यों?

तलाक़ के बारे में शरीअ़त का मिज़ाज मालूम हो चुका है कि तलाक़ किसी वक्ती मुनाफ़िरत और आरज़ी इख़्तिलाफ़ की वजह से नहीं देनी चाहिए; बल्कि तलाक़ से पहले शरीअ़त की बतलाई हुई तदाबीर और हिदायात पर अमल करने के बाद भी अगर मसअला हल न हो और मियाँ-बीवी दोनों को यक़ीन हो कि हमारे लिए आफ़ियत और सलामती जुदाइगी ही में है, तो ऐसी सूरत में सूझ बूझ और बाक़ाइदा होश व हवास के साथ तलाक़ देनी चाहिए। ज़ाहिर है कि तलाक़ से मुतअ़ल्लिक़ इस्लाम के इस मुअ़तदिल और अ़द्ल व इंसाफ़ पर मब्नी फ़ितरी निज़ाम में यह सवाल ही पैदा नहीं होना चाहिए कि तलाक़ का हक़ सिर्फ़ मर्द को क्यों दिया गया, औरत को क्यों नहीं दिया गया। इसलिए कि इस सवाल का मन्शा यह है कि नऊज़ु बिल्लाह इस्लाम ने तलाक़ का हक़ सिर्फ़ मर्दों को दे कर औरत के साथ नाइंसाफ़ी का मुआ़मला किया है। हालांकि इससे पहले की तफ़सील से यह बात साफ़ हो चुकी है कि इस्लाम में तलाक़ का निज़ाम ऐन अद्ल व इंसाफ़ के मुताबिक़ है, उस निज़ाम को अगर उसी तरह बरता जाए, जैसा शरीअ़त का मन्शा है तो यह सवाल पैदा ही नहीं होगा।

फ़िर भी उन लोगों के लिए जो अहकामे इस्लाम के मसालेह और हिकमतों को नाक़िस अक्ले इंसानी के ज़ाविये से देखना चाहते हैं, नीज़ बाज़ उन लोगों के लिए भी जिनको शरीअ़त के हर हुक्म पर मुकम्मल बसीरत और इन्शिराह है; लेकिन वह मज़ीद इतमिनान हासिल करना चाहते हैं; हम उसकी एक अहम हिकमत पेश करते हैं।

तलाक़ का हक़ मर्द को दिया जाना मर्द के मिज़ाज व तबीअ़त के मुवाफ़िक़ है, उसके बरख़िलाफ़ औरत को यह हक़ मिलना ख़ुद उसकी फ़ितरी शर्म व हया और मिज़ाज व तबीअ़त के ख़िलाफ़ है, इसलिए कि इस हक़ का सही इस्तेमाल करने के लिए बहुत सी उन सिफ़ात का होना ज़रूरी है जिन सिफ़ात में अल्लाह तआ़ला ने मर्दों को औरतों के मुक़ाबले में एक गुना फ़ौक़ियत अ़ता फ़रमाई है। मसलनः ताक़त व क़ुव्वत, जुरअत व हिम्मत, ख़ुद एतिमादी, दुसरों से मुतअस्सिर

न होना, ज़बान पर क़ाबू रखना, दूर अंदेशी, जल्दबाज़ी और जज़्बातियत से बचना; यह और इनके अलावा बहुत सी सिफ़ात हैं जिनमें अल्लाह तआ़ला ने मर्दों को औरतों के मुक़ाबले में आ़म तौर पर फ़ौक़ियत अता फ़रमाई है, दूसरी तरफ़ अल्लाह तआ़ला ने औरतों को भी मर्दों पर बहुत सी सिफ़ात और ख़ूबियों में फ़ौक़ियत अ़ता फ़रमाई है। मसलनः उलफ़त व मुहब्बत, रहम दिली और नर्मी, तहम्मुल व बर्दाश्त। मर्द और औरत के इस तबई फ़र्क़ को सारी दुन्या के समझदार लोग तसलीम करते हैं, इसलिए कि निज़ामे आलम के मुतवाज़िन तरीक़े पर चलने के लिए मर्द और औरत के दर्मियान इस फ़ितरी फ़र्क़ का होना लाज़मी और ज़रूरी है। हक़्क़े तलाक़ भी इसी लिए मर्दों को दिया गया कि उनके अन्दर अल्लाह की तरफ़ से वदीअ़त की जाने वाली मज़्कूरह बाज़ ख़ुसूसी सिफ़ात की बिना पर औरतों की बनिसबत इस हक़ को सही इस्तेमाल करने की सलाहियत और अहलियत ज़्यादा है; इसीलिए अगर कोई मर्द इस हक़ का ग़लत इस्तेमाल करता है तो शरीअ़ते इस्लामी की निगाह में वह सख़्त मुजरिम और ना फ़रमान समझा जाता है क्यों कि उस ने सलाहियत और अहलियत के बावुजूद जान बूझकर अपने हक़ से ग़लत फ़ाइदा उठाया।

यह हिकमत हम ने मिसाल के तौर पर पेश कर दी है, उलमाए किराम ने इसकी और भी हिक्मतें बयान की हैं जिन का ज़िक्र हम यहाँ ज़रूरी नहीं समझते, बल्कि यहां पर हम ख़ास तौर पर अपने मुसलमान भाइयों को इस हक़ीक़त की तरफ़ मुतवज्जह करना चाहते हैं कि शरीअ़ते इस्लामी अल्लाह का वह पसंदीदा मज़हब है, जो हर एतिबार से कामिल और मुकम्मल कर दिया गया है और इस मज़हब का हर हुक्म अपने अन्दर हज़ारहा हज़ार हिकमतों और मसलिहतों को लिए हुए है। एक मुसलमान की बंदगी और अ़बदियत की अस्ल शान यह है कि वह हर हुक्मे इलाही को फ़िकरी और अ़मली तौर पर महज़ इस बुन्याद पर तसलीम करे कि यह सारी दुन्या के मालिक व ख़ालिक़, बन्दों के मुशफ़िक़ व मुहसिन, बन्दों की मसलिहतों और फ़ाइदों को उनसे ज़्यादा जानने वाले, ग़ैब के भेदों से वाक़िफ़ और काइनात के निज़ाम को चलाने वाले एक माबूदे हक़ीक़ी का हुक्म है। हुक्मे इलाही की गहराइयों और

उसकी हक़ीक़ी हिकमतों का इंसान की नाक़िस अक्ल के ज़रिए पूरे तौर पर इदराक किया ही नहीं जा सकता। बन्दगी की यह शान एक मुसलमान के ईमान का आला मक़ाम है।

मौजूदा वक़्त में तलाक़ से मुतअ़ल्लिक़ बे ऐतिदालियां और उनका हल

हम ने गुज़िश्ता सफ़हात में तलाक़ से मुतअल्लिक़ जो तफ़सीलात बयान की हैं, अगर उनका गहराई से जाइज़ा लिया जाए और फिर तलाक़ के हवाले से पेश आने वाले वाक़िआ़त और मसाइल पर नज़र डाली जाए तो मालूम होगा कि इस वक्त जो कुछ बेऐतिदालियां सामने आ रही हैं उनकी वजह यह है कि:

मआ़शरे में तलाक़ जैसे अहम और नाज़ुक मआ़मले के बुन्यादी मसाइल से वाक़फ़ियत नहीं है और तलाक़ के सिलसिले में ख़ास तौर पर एक ऐसी ग़लत फ़हमी आम हो चुकी है जो सारे फ़साद और ख़राबियों की जड़ है, वह यह है कि अवामुन्नास का एक बड़ा तब्क़ा यह समझता है कि इस्लाम में तलाक़ सिर्फ़ तीन बार कहने ही से वाकेअ़ होती है इसके बग़ैर तलाक़ वाक़ेअ़ नहीं होती। इसीलिए आम तौर पर एक आमी शख़्स जब भी तलाक़ देता है तो वह तीन से कम पर नहीं रूकता, तलाक़ की अगर कोई तहरीर तय्यार की जाती है तो वह भी तीन ही तलाक़ की होती है।

ज़ाहिर है कि यह ग़लत फ़हमी ऐसी है जिसका हल इसके सिवा कुछ नहीं कि मआ़शरे में निकाह के रिश्ते की अहमियत, बिला वजह इस रिश्ते को तोड़ने की शरई और अक़ली क़बाहत व मज़म्मत, निकाह के बाद मियाँ-बीवी और उनके ख़ानदान के दरमियान पेश आने वाले मसाइल का शरई हल, तलाक़ के मुतअल्लिक़ इस्लाम की तालीमात और साथ में तलाक़ देने के सही और बेहतर तरीक़े को ज़्यादा से ज़्यादा आम किया जाए।

तलाक़ की कसरत की दूसरी अहम वजह यह है कि:

मआ़शरे का दीनी बिगाड़, अल्लाह के हुकमों को तोड़ना, नाफ़रमांनियों की कसरत, फ़ह्हाशी के फैलाव और उसकी वजह से तबई सुकून व इतमिनान का हासिल न होना, नशा आवर चीज़ों की लत, ख़ानदानी असबियत की बिना पर होने वाले झगड़े और इनके अलावा बहुत सी ख़राबियां मुआ़शरे में आम हो गई हैं, जिन के दुन्यवी नुक़सानात में से एक अहम नुक़सान तलाक़ के बेजा इस्तेमाल की कसरत की सूरत में भी ज़ाहिर हो रहा है।

उस का हल यह है कि मुसलमानों को दीन पर चलने, अल्लाह के अहकाम को पूरा करने, हुज़ूर पाक सल्ल0 की सुन्नतों को अपनाने, गुनाह और मअ़सियत के कामों से बचने की तरफ़ मुतवज्जह किया जाए, इसलिए कि दीनी अहकाम की सही वाक़फ़ियत हासिल करना और दीन पर चलना ही सारे मसाइल का हल है और अहकाम से नावाक़फ़ियत और अमली तौर पर दीन से दूरी ही सारी ख़राबियों की जड़ और बुन्याद है।

हिस्सा दोम

तलाक़, खुला और इद्दत वग़ैरह के चन्द अहम और ज़रूरी मसाइल

माख़ूज़ अज़:

तसहील बहिश्ती ज़ेवर

इफ़ादात

हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह०)

फ़ेहरिस्त हिस्सा दोम

किस की तलाक़ वाक़ेअ़ होगी, किस की नहीं

मसअला(1):

नाबालिग़ और पागल की तलाक़ वाक़ेअ़ नहीं होती।

मसअला(2):

सोए हुए आदमी के मुंह से निकला कि तुझ को तलाक़ है या यूं कह दिया: "मेरी बीवी को तलाक़" तो उससे तलाक़ नहीं होती।

मसअला(3):

किसी ने ज़बरदस्ती किसी से ज़बानी तलाक़ दिलवादी, जैसे: मारा, डराया, धमकाया कि तलाक़ दे दो, वरना तुझे मार डालूंगा, इस मजबूरी से उसने ज़बान से तलाक़ के अलफ़ाज़ कह दिए, तो भी तलाक़ हो जाएगी। अगर सिर्फ़ तहरीर किया और ज़बान से न कहा तो तलाक़ न होगी।

मसअला(4):

किसी ने शराब वग़ैरह के नशे में अपनी बीवी को तलाक़ दे दी, तो भी तलाक़ हो जाएगी। इसी तरह अगर गु़स्से में तलाक़ दी तो भी तलाक़ हो जाएगी।

मसअला(5):

शौहर के अलावा किसी और को तलाक़ देने का इख़्तियार नहीं, अलबत्ता अगर शौहर ने किसी को इखतियार दिया कि मेरी बीवी को तलाक़ दे दे, तो वह भी दे सकता है। (अगर बीवी को इख़्तियार दिया और उसने अपने ऊपर तलाक़ वाक़ेअ़ कर ली, तो भी हो जाएगी।

मसअला(6):

तलाक़ देने का इख़्तियार सिर्फ़ मर्द को है, जब मर्द ने तलाक़ दे दी तो तलाक़ हो गई। औरत को उसमें कोई इख़्तियार नहीं, वह

चाहे या न चाहे, हर सूरत में तलाक़ हो गई। औरत अपने शौहर को तलाक़ नहीं दे सकती।

मसअला(7):

मर्द को सिर्फ़ तीन तलाक़े देने का इख़्तियार है, उससे ज़्यादा का इख़्तियार नहीं, अगर चार पाँच तलाक़ें दे दीं तब भी तीन ही हुई।

मसअला(8):

जब मर्द ने ज़बान से कह दिया: मैंने अपनी बीवी को तलाक़ दे दी और इतने ज़ोर से कहा कि ख़ुद उन अलफ़ाज़ को सुन लिया, तो बस इतना कहते ही तलाक़ हो जाएगी, चाहे किसी के सामने कहे, या तनहाई में और चाहे बीवी सुने या न सुने, हर हाल में तलाक़ हो जाएगी।

तलाक़ की क़िस्में

पहली तक़सीम बएतिबारे हुक्म

हुक्म के ऐतिबार से तलाक़ की तीन क़िस्में हैं :

(1) तलाक़े रजई

वह तलाक़ जिसमें निकाह नहीं टूटता, साफ़ लफ़्ज़ों में एक या दो तलाक़ देने के बाद अगर मर्द पशेमान हुआ, तो नए सिरे से निकाह करना ज़रूरी नहीं, निकाह के बग़ैर भी मियाँ-बीवी की तरह रहना, तो दुरूस्त है, अलबत्ता अगर मर्द तलाक़ दे कर उस पर क़ाइम रहा और उससे रूजूअ़ नहीं किया, तो जब तलाक़ की इद्दत गुज़र जाए तब निकाह टूट जाएगा और औरत जुदा हो जाएगी। जब तक इद्दत न गुज़रे तब तक रखने न रखने दोनों बातों का इख़्तियार है।

(2) तलाक़े बाइन

ऐसी तलाक़ है जिसमें निकाह बिल्कुल टूट जाता है और नया निकाह किए बग़ैर उस मर्द के पास रहना जाइज़ नहीं होता अगर आइन्दा मियाँ-बीवी आपस में रहना चाहें और दोनों इस पर राज़ी भी हों तो नए सिरे से निकाह करना पड़ेगा।

(3) तलाक़े मुग़ल्लज़ा

वह तलाक़ जिसमें निकाह ऐसा टूटता है कि दुबारा निकाह करना भी चाहें तो हलाला के बग़ैर नहीं कर सकते। हलाला यह है कि तलाक़ याफ़्ता औरत का इद्दत गुज़ार कर किसी दूसरे मर्द से निकाह हो जाए और सुहबत भी हो जाए, फिर वह मर्द अपनी मर्ज़ी से उसको तलाक़ दे या मर जाए और इद्दत गुज़र जाए तो पहले शौहर के साथ निकाह कर सकती है।

दूसरी तक़सीम बएतिबारे अल्फ़ाज़

अल्फ़ाज़ के ऐतिबार से तलाक़ की दो क़िस्में हैं :

(1) सरीह

साफ़ साफ़ लफ़्ज़ों में कह दिया: "मैंने तुझ को तलाक़ दे दी" या यूं कहा : "मैंने अपनी बीवी को तलाक़ दे दी", ग़रज़ यह कि साफ़ अल्फ़ाज़ कह दिए जिसमें तलाक़ देने के सिवा कोई और मअ़ना नहीं निकल सकते, तो ऐसी तलाक़ को "तलाक़े सरीह" कहते हैं।

(2) किनाया

साफ़ साफ़ अल्फ़ाज़ नहीं कहे, बल्कि ऐसे अल्फ़ाज़ कहे जिनसे तलाक़ भी मुराद ली जा सकती है और तलाक़ के सिवा दूसरे मअ़ना भी निकल सकते हैं, जैसे कोई कहे: "मैं ने तुझ को दूर कर दिया", इसका एक मतलब यह है कि मैंने तुझ को तलाक़ दे दी। दूसरा

मतलब यह हो सकता है कि तलाक़ तो नहीं दी लेकिन अब तुझको अपने पास नहीं रखूंगा, हमेशा अपने मैके में रह, तेरी ख़बर नहीं रखूंगा, या यूं कहे : मुझे तुझसे कोई वास्ता नहीं'', ''मुझे तुझसे कोई मतलब नहीं'', ''तु मुझसे जुदा हो गई'', ''मैंने तुझको अलग कर दिया'', ''जुदा कर दिया'',''मेरे घर से चली जा'',''हट दूर हो'', ''अपने माँ-बाप के यहां जा के बैठ'', ''अपने घर जा'' इसी तरह के दूसरे अल्फ़ाज़ जिनमें दोनों मतलब हो सकते हैं उसको ''किनाया'' कहते हैं।

मसअला(9):

अगर साफ़-साफ़ लफ़्ज़ों में तलाक़ दी तो ज़बान से निकलते ही तलाक़ पड़ जाए गी, चाहे तलाक़ देने की नियत हो या न हो, बल्कि हंसी, दिल्लगी में कहा हो, बहर सूरत तलाक़ हो गई और साफ़ लफ़्ज़ो में तलाक़ देने से तलाक़े रजई पड़ती है और एक मरतबा कहने से एक ही तलाक़ पड़ेगी अलबत्ता अगर तीन दफ़ा कहे या यूं कहे ''तुझको तीन तलाक़ दीं'' तो तीन तलाक़ें पड़ीं।

मसअला(10):

किसी ने एक तलाक़ दी तो जब तक औरत इद्दत में रहे तब तक दूसरी तलाक़ और तीसरी तलाक़ देने का इख़्तियार रहता है, अगर देगा तो पड़ जाएगी।

मसअला(11):

किसी ने यूं कहा: ''तुझ को तलाक़ दे दूंगा'' तो इस से तलाक़ नहीं हुई। इसी तरह अगर किसी बात पर यूं कहा: ''अगर फलां काम करेगी तो तलाक़ है तो वह काम करने से तलाक़ हो जाएगी।

मसअला(12):

किसी ने तलाक़ दे कर उसके साथ ही इन्शा अल्लाह भी कह दिया तो तलाक़ नहीं पड़ी। इसी तरह अगर यूं कहा: ''अगर

अल्लाह तआ़ला चाहे तो तुझको तलाक़", इससे भी किसी क़िस्म की तलाक़ नहीं पड़ती, अलबत्ता अगर तलाक़ देकर ज़रा ठहर गया, फिर इन्शा अल्लाह कहा तो तलाक़ हो गई।

मसअला(13):

किसी ने अपनी बीवी को तलाक़न कह कर पुकारा तब भी तलाक़ पड़ गई, अगरचे मज़ाक़ में कहा हो।

मसअला(14):

किसी ने कहा: "जब तू फ़लां शहर जाए तो तुझको तलाक़ है" तो जब तक वहां नहीं जाएगी तलाक़ नहीं पड़ेगी।

मसअला(15):

अगर साफ़-साफ़ तलाक़ नहीं दी, बल्कि गोल मोल अल्फ़ाज़ कहे और इशारा किनाया से तलाक़ दी तो यह मुबहम अल्फ़ाज़ कहते वक़्त अगर तलाक़ देने की नियत थी तो तलाक़ बाइन होगी, निकाह के बग़ैर औरत को नहीं रख सकता और अगर तलाक़ की नियत नहीं थी, बल्कि दूसरे मआ़नी के एतिबार से कहा था तो तलाक़ नहीं हुई, अलबत्ता अगर क़रीने से मालूम हो जाए कि तलाक़ देने ही की नियत थी, अब वह झूठ बोल रहा है तो औरत उसके पास न रहे और यही समझे कि तलाक़ हो गई, जैसे बीवी ने ग़ुस्से में आकर कहा: "मेरा तेरा निबाह नहीं होगा, मुझको तलाक़ देदे" उसने कहा "अच्छा मैंने छोड़ दिया तो यहां औरत यही समझे कि शौहर ने तलाक़ दे दी"।

मसअला(16):

किसी ने तीन दफ़ा कहा: "तुझ को तलाक़, तलाक़, तलाक़" तो तीनों पड़ गईं या गोल मोल अल्फ़ाज़ में तीन मरतबा कहा तब भी तीन तलाक़ें हो गईं, लेकिन अगर नियत एक ही तलाक़ की है सिर्फ़ और सिर्फ़ ताकीद के लिए तीन दफ़ा कहा था कि बात ख़ूब पक्की हो जाए तो एक ही तलाक़ हुई। लेकिन औरत को

चूंकि उसके दिल का हाल मालूम नहीं इसलिए वह यही समझे कि तीन तलाक़ें हो गईं।

रूख़सती से पहले तलाक़

मसअला(17):

औरत शौहर के पास न जाने पाई थी कि उसने तलाक़ दे दी या रूख़सती तो हो गई लेकिन मियाँ-बीवी की आपस में बग़ैर किसी शरई या तबई रूकावट के तनहाई नहीं होने पाई थी कि शौहर ने तलाक़ दे दी तो तलाक़ बाइन हो गई, चाहे साफ़ लफ़्ज़ों में दी हो या गोल मोल लफ़्ज़ों में। ऐसी औरत को जब तलाक़ दी जाए तो दूसरी ही क़िस्म यानी बाइन तलाक़ होती है। और ऐसी औरत के लिए तलाक़ की इद्दत भी कोई नहीं, तलाक़ के बाद फ़ौरन दूसरे मर्द से निकाह कर सकती है और ऐसी औरत को एक तलाक़ देने के बाद, दूसरी तीसरी तलाक़ देने का इख़्तियार नहीं, अगर देगा तो नहीं पड़े गी। अलबत्ता अगर पहली दफ़ा ही यूं कह दे: ''तुझको दो तलाक़ या तीन तलाक़'' तो जितनी दी हैं सब पड़ गई और अगर यूं कहा: ''तुझको तलाक़ है, तलाक़ है, तलाक़ है ''तब भी ऐसी औरत को एक ही तलाक़ पड़े गी।

रूख़सती के बाद तलाक़ :

मसअला(18):

रूख़सती और मियाँ-बीवी की तन्हाई के साथ अगर सुहबत भी हो गई, उसके बाद अगर एक या दो तलाक़ें साफ़ लफ़्ज़ों में दे दीं तो तलाक़ रजई होगी और गोल मोल लफ़्ज़ों में दी तो तलाक

बाइन होगी। रजई में रूजूअ़ का हक़ होगा और बाइन में रूजूअ़ का हक़ नहीं होगा, अलबत्ता अगर तीन तलाक़ें नहीं दीं तो उसी शौहर से नया निकाह (जब कि मियाँ-बीवी दोनों राज़ी हों) इद्दत के अन्दर भी हो सकता है और इद्‌दत के बाद भी, और दूसरे शख़्स से इद्‌दत के बाद ही निकाह हो सकता है और इद्‌दत हर सूरत में लाज़िम होगी और जब तक इद्‌दत ख़त्म ने हो दूसरी और तीसरी तलाक़ भी दी जा सकती है; और अगर तन्हाई ऐसी हो गई कि सुहबत करने से कोई मानेअ़ शरई या तबई मौजूद नहीं था मगर सुहबत नहीं हुई तो इस सूरत में अगर साफ़ लफ़्ज़ों में तलाक़ दी जाए या गोल मोल लफ़्ज़ों में दोनों सूरतों में तलाक़ बाइन ही पड़ेगी और इद्‌दत भी वाजिब होगी और रूजूअ़ का हक़ भी नहीं होगा और इद्‌दत पूरी किए बग़ैर किसी दूसरे से निकाह भी नही कर सकती, अलबत्ता उस शख़्स से जिसने तलाक़ दी है इद्‌दत के अन्दर और इद्‌दत ख़त्म होने के बाद हर हाल में दोबारा निकाह कर सकती है, शर्त यह है कि तीन तलाक़ें न दी हों।

तीन तलाक़ों का हुक्म :

मसअला(19):

अगर किसी ने अपनी बीवी को तीन तलाक़ें दे दीं तो वह औरत उस मर्द के लिए हराम हो गई, अब अगर दोबारा निकाह करे तब भी औरत के लिए उस मर्द के पास रहना हराम है और यह निकाह नहीं हुआ, चाहे साफ़ लफ़्ज़ों में तीन तलाक़ें दी हों या गोल मोल लफ़्ज़ों में, सबका एक ही हुक्म है।

मसअला(20):

किसी ने अपनी बीवी को एक तलाक ़रजई दी फिर रूजूअ़ किया फिर दो चार साल में किसी बात पर ग़ुस्सा आया तो एक तलाक़ रजई और दे दी, फिर जब गुस्सा उतरा तो रूजूअ़ किया, यह दो

तलाकें हो गई, अब उसके बाद अगर कभी एक तलाक़ और दे देगा तो तीन पूरी हो जाएंगी और उसका हुक्म यह होगा कि इद्दत के बाद किसी और से निकाह और उसकी मौत या तलाक़ की सूरत में इद्दत गुज़ारे बग़ैर उस मर्द से निकाह नहीं हो सकता। इसी तरह अगर किसी ने तलाक़ बाइन दी जिसमें रूजूअ़ करने का इख़्तियार नहीं होता, फिर पशेमान हुआ और मियाँ-बीवी ने राज़ी हो कर दोबारा निकाह कर लिया, कुछ ज़माने के बाद ग़ुस्सा आया और एक तलाक़ बाइन दे दी और ग़ुस्सा उतरने के बाद फिर निकाह कर लिया, यह दो तलाकें हुई। अब तीसरी दफ़ा अगर तलाक़ देगा तो फिर वही हुक्म है कि दूसरा ख़ाविन्द किए बग़ैर उससे निकाह नहीं कर सकती।

मसअला(21):

तीन तलाकें एक दम से दे दीं, जैसे: यूं कह दिया: ''तुझको तीन तलाक़ या यूं कहा: तुझको तलाक़ है, तलाक़ है, तलाक़ है या अलग करके तीन तलाकें दीं, जैसे: एक आज दी, एक कल, एक परसों या एक इस महीने में, एक दूसरे महीने में, एक तीसरे महीने में, यानी: इद्दत के अन्दर अन्दर तीनों तलाक़ दे दीं, सबका एक ही हुक्म है और साफ़ लफ़्ज़ों मं तलाक़ दे कर फिर रोके रखने का इख़्तियार उसी वक़्त होता है जब तीन तलाकें न दे, फ़क़त एक या दो दे। जब तीन तलाकें दे दीं तो अब कुछ नहीं हो सकता।

मसअला(22):

अगर दूसरे मर्द से इस शर्त पर निकाह हुआ कि सुहबत कर के औरत को छोड़ देगा तो इस इक़रार लेने का एतिबार नहीं, उसको इख़्तियार है चाहे छोड़े या न छोड़े और जब जी चाहे छोड़े और इस तरह से तय कर के निकाह करना बहुत बड़ा गुनाह और हराम है, अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से ऐसे लोगों पर लअ़नत होती है, लेकिन निकाह हो जाता है। लेहाज़ा अगर इस निकाह के बाद दूसरे ख़ाविन्द ने सुहबत करके छोड़ दिया या मर गया तो औरत पहले ख़ाविन्द के लिए हलाल हो जाए गी।

किसी शर्त पर तलाक़ देना :

मसअला(23) :

निकाह करने से पहले किसी औरत को कहा: ''अगर मैं तुझसे निकाह करूं तो तुझे तलाक़ है'' तो जब उस औरत से निकाह करेगा तो निकाह करते ही तलाक़ बाइन पड़ जाए गी और अगर यूं कहा: ''अगर तुझसे निकाह करूं तो तुझे दो तलाक़'' तो दो बाइन तलाकें हो गई और अगर तीन तलाक़ों का कहा तो तीनों हो गई और औरत मुग़ल्लज़ा हो गई।

मसअला(24) :

निकाह होते ही जब उस पर तलाक़ पड ़गई तो उसने उसी औरत से फिर निकाह कर लिया तो अब यह दूसरा निकाह करने से तलाक़ नहीं पड़ेगी, हां, अगर यूं कहा हो: ''जै दफ़ा तुझ से निकाह करूं, हर दफ़ा तुझ को तलाक़ है, तो जब निकाह करेगा तो हर बार तलाक़ पड़ जाया करे गी, अब उस औरत को रखने की कोई सूरत नहीं, अगर दूसरा ख़ाविन्द करके उस मर्द से निकाह करेगी तो भी तलाक़ पड़ जाएगी।

मसअला(25) :

किसी ने कहा: ''जिस औरत से निकाह करूं उसको तलाक़'' तो जिस से निकाह करेगा उस पर तलाक़ पड़ जाएगी। अलबत्ता तलाक़ पड़ने के बाद अगर फिर उसी औरत से निकाह कर लिया तो तलाक़ नहीं पड़े गी।

मसअला(26):

जिस औरत से अभी निकाह नहीं किया उसको इस तरह कहा: ''अगर तू फ़लां काम करे तो तुझे तलाक़'' तो उसका एतिबार नहीं, अगर उससे निकाह कर लिया और निकाह के बाद उसने वही काम किया तब भी तलाक़ नहीं पड़ी, क्योंकि ग़ैर मनकूहा को तलाक़ देने की यही सूरत है कि यूं कहे: ''अगर तुझ से निकाह करूं तो तलाक़'' इसके अलावा किसी और तरीक़े से अजनबी औरत पर तलाक़ नहीं पड़ सकती।

मसअला(27):

अगर अपनी बीवी से कहा: ''अगर तू फ़लां काम करे तो तुझे तलाक़'', ''अगर मेरे पास से जाए तो तुझे तलाक़'', ''अगर तु उस घर में जाए तो तुझे तलाक़'' या किसी और काम पर तलाक़ मुअ़ल्लक़ कर दी तो जब वह काम करेगी तब तलाक़ पड़ जाएगी, अगर नहीं करेगी तो नहीं पड़ेगी और तलाक़ रजई पड़ेगी, अलबत्ता अगर कोई किनाई लफ़्ज़ कहे कि अगर तु फ़लां काम करें तो मुझे तुझसे कोई वास्ता नहीं तो जब वह काम करेगी तब तलाक़ बाइन पड़ेगी, बशर्ते कि मर्द ने यह अल्फ़ाज़ कहते वक़्त तलाक़ की नियत की हो।

मसअला(28):

अगर यूं कहा: ''अगर फ़लां काम करे तो तुझे दो तलाक़ या तीन तलाक़'' तो जितनी तलाकों का कहा उतनी पड़ेंगी।

मसअला(29):

अपनी बीवी से कहा: ''अगर तू उस घर में जाए तो तुझे तलाक़'' और वह चली गई और तलाक़ पड़ गई फिर इद्दत के अन्दर अन्दर उसने रूजूअ़ कर लिया या दोबारा निकाह कर लिया तो अब दोबारा घर में जाने से तलाक़ नहीं पड़ेगी, अलबत्ता अगर यूं कहा हो: ''जितनी मरतबा उस घर में जाए हर मरतबा तुझको

तलाक़'' या यूं कहा हो: ''जब कभी तू घर में जाए हर मरतबा तलाक'' तो इस सूरत में इद्दत के अन्दर या निकाह कर लेने के बाद दूसरी मरतबा घर में जाने से दूसरी तलाक़ हो गई फिर इद्दत के अन्दर या तीसरे निकाह के बाद अगर तीसरी दफा घर में जाएगी तो तीसरी तलाक़ हो जाएगी, अब तीन तलाक़ों के बाद उससे निकाह दुरूस्त नहीं। अलबत्ता अगर दूसरे मर्द के साथ निकाह हो जाने के बाद जुदाई हो जाए फिर उस मर्द से निकाह करे तो अब उस घर में जाने से तलाक़ नहीं होगी।

मसअला(30):

किसी ने अपनी बीवी से कहा: ''अगर तू फलां काम करे तो तुझे तलाक़'' अभी उसने वह काम नहीं किया था कि उसने एक फ़ौरी तलाक़ दे दी और कुछ मुद्दत के बाद फिर उस औरत से निकाह किया और उस निकाह के बाद उसने वही काम किया तो तलाक़ वाक़ेअ़ हो गई और अगर तलाक़ पाने के बाद इद्दत के अन्दर उसने वही काम किया तब भी दूसरी तलाक़ हो गई। अलबत्ता अगर तलाक़ पाने और इद्दत गुज़र जाने के बाद उस निकाह से पहले उसने वही काम कर लिया और फिर दोनों को निकाह हो गया तो इस निकाह के बाद अब वह काम करने से तलाक़ नहीं होगी।

मसअला(31):

किसी ने अपनी बीवी से कहा: ''अगर तुझे हैज़ आए तो तुझे तलाक़'' उसके बाद उसने खून देखा तो अभी से तलाक़ वाक़ेअ़ न होगी बल्कि जब पूरे तीन दिन तीन रात ख़ून आता रहे तो उसके बाद यह हुक्म लगाया जाएगा कि जिस वक़्त से ख़ून आया था उसी वक़्त तलाक़ हो गई थी और अगर यूं कहा: ''जब तुझे एक हैज़ आए या पूरा हैज़ तो तुझे तलाक़'' तो हैज़ के ख़त्म होने पर तलाक़ वाक़ेअ़ होगी।

मसअला(32):

अगर किसी ने अपनी बीवी से कहा: ''अगर तू रोज़ा रखे तो तुझे तलाक़'', तो रोज़ा रखते ही फ़ौरन तलाक़ हो जाए गी, अलबत्ता

अगर यूं कहा: ''अगर तू एक रोज़ा रखे या पूरा दिन रोज़ा रखे तो तुझे तलाक़'' तो रोज़ा के मुकम्मल होने पर तलाक़ वाक़ेअ़ होगी, अगर रोज़ा तोड़ दे तो तलाक़ न होगी।

मसअला(33):

औरत ने घर से बाहर जाने का इरादा किया, मर्द ने कहा: ''अभी मत जाओ'' औरत न मानी, उस पर मर्द ने कहा: ''अगर तू बाहर जाए तो तुझे तलाक़'' तो उसका हुक्म यह है कि अगर फ़ौरन बाहर जाएगी तो तलाक़ हो जाएगी और अगर फ़ौरन न गई, कुछ देर बाद गई तो तलाक़ नहीं होगी, क्योंकि उसका मतलब यही था कि अभी मत जाओ बाद में जाना, यह मतलब नहीं था कि उम्र भर कभी नहीं जाना।

मसअला(34):

किसी ने यूं कहा: ''जिस दिन तुझ से निकाह करूं, तुझको तलाक़'' फिर रात के वक़्त निकाह किया तब भी तलाक़ पड़ गई, क्योंकि बोल चाल में इसका मतलब यह है कि जिस वक़्त तुझ से निकाह करूं तुझे तलाक़ है।

बीमार की तलाक़

मसअला(35):

बीमारी की हालत में किसी ने अपनी बीवी को तलाक़ दे दी, फिर औरत की इद्दत अभी ख़त्म नहीं हुई थी कि उसी बीमारी में मर गया तो शौहर के माल में से बीवी का जितना हिस्सा होता है उतना उस औरत को भी मिलेगा, चाहे एक तलाक़ दी हो या दो तीन और चाहे तलाक़ रजई दी हो या बाइन, सब का एक ही हुक्म है। अगर इद्दत ख़त्म होने के बाद मरा तो औरत मीरास में हिस्सेदार नहीं होगी। इसी तरह अगर मर्द उसी बीमारी में नहीं मरा, बल्कि तन्दुरूस्त हो गया, फिर बीमार हो गया तब भी औरत हिस्सा नहीं पाए गी, चाहे इद्दत ख़त्म हो चुकी हो या न ख़त्म हुई हो।

मसअला(36):

औरत ने तलाक़ मांगी थी, इसलिए मर्द ने तलाक़ देदी, तब भी औरत मीरास की मुस्तहिक़ नहीं, चाहे शौहर इद्दत के अन्दर इन्तिक़ाल करे या इद्दत के बाद, दोनों का एक ही हुक्म है। अल्बत्ता अगर तलाक़े रजई हो और इद्दत के अन्दर इन्तिक़ाल कर जाए तो मीरास पाए गी।

मसअला(37):

बीमारी की हालत में औरत से कहा: ‘‘अगर तू घर से बाहर जाए तो तुझे बाइन तलाक़ है’’ फिर औरत बाहर गई और तलाक़े बाइन पड़ गई तो इस सूरत में हिस्सा नहीं पाएगी, क्योंकि उसने ख़ुद ऐसा काम किया जिससे तलाक़ पड़ी और अगर यूं कहा: ‘‘अगर तू खाना खाए तो तुझे तलाक़ बाइन है’’ या यूं कहा: अगर तू नमाज़ पढ़े तो तुझे तलाक़े बाइन है’’ ऐसी सूरत में अगर वह इद्दत के अन्दर मर जाएगा तो औरत को हिस्सा मिलेगा,

क्योंकि औरत के इख़्तियार से तलाक़ नहीं पड़ी, खाना खाना और नमाज़ पढ़ना तो ज़रूरी है, उसको छोड़ नहीं सकती थी और अगर तलाक़े रजई दी हो तो पहली सूरत में भी (यानी जब ग़ैर ज़रूरी काम किया) इद्दत के अन्दर अन्दर मरने से हिस्सा पाएगी। ग़रज़ ये कि तलाक़े रजई में बहर हाल हिस्सा मिलता है, बशर्ते कि इद्दत के अन्दर फ़ौत हुआ हो।

मसअला(38):

किसी तन्दुरूस्त आदमी ने अपनी बीवी से कहा: जब तू घर से बाहर निकले तो तुझे तलाक़े बाईन'' फिर जिस वक़्त वह घर से बाहर निकली उस वक़्त वह बीमार था और उसी बीमारी में इद्दत के अन्दर मर गया तब भी औरत हिस्सा नहीं पाए गी, (क्योंकि औरत के ऐसे फ़ेल से तलाक़ पड़ी जो ज़रूरी न था इसलिए कि यहां वह सूरत मुराद है जिसमें औरत घर से निकलने पर मजबूर नहीं थी, गोया औरत ने ख़ुद तलाक़ को इख़्तियार किया)।

मसअला(39):

तन्दुरूस्ती के ज़माने में कहा: ''जब तेरा बाप आए तो तुझे बाईन तलाक़'' जब वह आया तो उस वक़्त वह मर्द बीमार था और उसी बीमारी में मर गया तो औरत हिस्सा नहीं पाएगी और अगर बीमारी की हालत में यह कहा हो और उसी बीमारी में इद्दत के अन्दर मर गया हो तो हिस्सा पाएगी। (क्योंकि पहली सूरत में शौहर की तरफ़ से बीवी को मीरास से महरूम करने का क़सद नहीं पाया गया, इसलिए कि हालते सेहत में शौहर के माल में बीवी का हक़ मुतअ़ल्लिक़ नहीं होता, दूसरी सूरत में बीवी का हक़ मुतअ़ल्लिक़ हो गया। शौहर ने उसको महरूम करने की कोशिश की लेहाज़ा औरत महरूम नहीं होगी)।

तलाक़ रजई के बाद रूजुअ़

मसअला(40):

जब किसी ने एक या दो रजई तलाक़ें दीं तो इद्दत ख़त्म होने से पहले पहले मर्द को इख़्तियार है कि उससे रूजुअ़ करे, इस सूरत में दोबारा निकाह करने की ज़रूरत नहीं, औरत चाहे राज़ी हो या राज़ी न हो, उसको इख़्तियार नहीं और अगर तीन तलाक़ें देदीं तो उसका हुक्म पहले बयान हो चुका है, उसमें रूजुअ़ का इख़्तियार नहीं।

मसअला(41):

रूजुअ़ करने का तरीक़ा यह है कि या तो साफ़-साफ़ ज़बान से कह दे कि मैं तुझसे रूजुअ़ करता हूँ या औरत से नहीं कहा किसी और से कहा कि मैं ने अपनी बीवी से रूजुअ़ कर लिया, बस इतना कह देने से दुबारा उसकी बीवी हो गई।

मसअला(42):

रूजुअ़ का एक तरीक़ा यह भी है कि ज़बान से तो कुछ नहीं कहा लेकिन औरत से सुहबत कर ली या उसका बोसा लिया, प्यार किया या शहवत के साथ उसको हाथ लगाया तो इन सब सूरतों में फिर वह उसकी बीवी बन गई, दोबारा निकाह करने की ज़रूरत नहीं।

मसअला(43):

जब तलाक़ से रूजुअ़ करने का इरादा हो तो बेहतर है कि दो चार लोगों को गवाह बनाले क्योंकि शायद कभी कोई इख़्तिलाफ़ या तनाज़ोअ़ पेश आए तो कोई इन्कार न कर सके। अगर किसी को गवाह न बनाया तब भी रूजुअ़ सही है।

मसअला(44):

अगर औरत की इद्दत गुज़र गई तो उसके बाद रूजुअ़ नहीं कर सकता अब अगर औरत राज़ी हो तो दोबारा निकाह करना पड़ेगा, निकाह के बग़ैर औरत को नहीं रख सकता। अगर शौहर रखे भी तो औरत के लिए उसके पास रहना दुरूस्त नहीं।

मसअला(45):

जिस औरत को हैज़ आता हो उसके लिए तलाक़ की इद्दत तीन हैज़ है। जब तीन हैज़ पूरे हो जाएं तो इद्दत गुज़र जाएगी, फिर अगर तीसरा हैज़ पूरे दस दिन आया है तब तो जिस वक़्त ख़ून बन्द हुआ और दस दिन पूरे हुए उस वक़्त इद्दत ख़त्म हो गई और रूजुअ़ करने का इख़्तियार मर्द को जो था वह ख़त्म हो गया, चाहे औरत नहा चुकी हो या अभी तक न नहाई हो और अगर तीसरा हैज़ दस दिन से कम आया और ख़ून बन्द हो गया लेकिन अभी औरत ने ग़ुस्ल नहीं किया और न कोई नमाज़ उसके ऊपर वाजिब हुई तो अब भी मर्द का इख़्तियार बाक़ी है, अलबत्ता अगर ख़ून बन्द होने पर उसने ग़ुस्ल कर लिया या ग़ुस्ल तो नहीं किया लेकिन एक नमाज़ का वक़्त गुज़र गया, यानी एक नमाज़ की क़ज़ा उसके ज़िम्मे वाजिब हो गई। इन दोनों सूरतों में मर्द का इख़्तियार ख़त्म हो गया। अब निकाह किए बग़ैर औरत को नहीं रख सकता।

मसअला(46):

जिस औरत से अभी सुहबत न की हो, अगरचे तन्हाई हो चुकी हो उसको एक तलाक़ देने से रूजुअ़ का इख़्तियार नहीं रहता, क्योंकि उसको जो तलाक़ दी जाएगी वह तलाक़ बाइन होगी जैसा कि पहले बयान हो चुका है।

मसअला(47):

अगर दोनों एक जगह तन्हाई में तो रहे लेकिन मर्द कहता है कि मैने सुहबत नहीं की, फ़िर इस इकरार के बाद तलाक़ दी तो रूजुअ़ का इख़्तियार नहीं रहा।

मसअला(48):

जिस औरत को एक या दो रजई तलाक़ मिली हो, जिस में मर्द को तलाक़ से रूजुअ़ का इख़्तियार होता है ऐसी औरत के लिए मुनासिब है कि ख़ूब बनाव सिंगार कर के रहा करे, शायद मर्द का दिल उसकी तरफ़ राग़िब हो और रूजुअ़ कर ले। अगर मर्द का इरादा रूजुअ़ करने का न हो तो उसके लिए मुनासिब है कि जब घर में आए तो खांस खंखार कर आए ताकि वह अपना बदन अगर कुछ खुला हुआ हो तो छुपा ले और किसी बे मौक़ा जगह निगाह न पड़े और जब इद्दत पूरी हो जाए तो औरत कहीं और जाकर रहे।

मसअला(49):

जिस औरत को एक या दो बाइन तलाक़ें दे दीं तो उसका हुक्म यह है कि अगर किसी और मर्द से निकाह करना चाहे तो इद्दत के बाद निकाह करे, इद्दत के अन्दर निकाह दुरूस्त नहीं और ख़ुद उसी शौहर से निकाह करना हो तो इद्दत के अन्दर भी हो सकता है।

तहरीरी तलाक़

तलाक़ लिख कर देने से भी हो जाती है। इसी तरह तलाक़ नामा पर दस्तख़त कर देने और अंगुठा लगाने से भी तलाक़ हो जाती है।

गुस्सा में तलाक़

गुस्सा के तीन दरजात हैं:

(1) इब्तिदाई दर्जा यह है कि उसमें अक्ल के अन्दर कोई तग़य्युर और फ़ुतूर नहीं आता, जो कुछ कहता है अपने इरादे से कहता है और उसको समझता है। इस सूरत में उसकी बातें आम लोगों की बातों की तरह शरअ़न मुअ़तबर हैं और उसकी तलाक़ वाक़ेअ़ और नाफ़िज़ होगी।

(2) आला और इन्तिहाई दर्जा यह है कि गुस्सा उस हद तक पहुंच जाए कि उसे अपने अक़वाल और अफ़आ़ल की कोई ख़बर न रहे। यह सूरत बेहोशी और जुनून की तरह है। ऐसे शख़्स के अक़वाल व अफ़आ़ल मुअ़तबर नहीं और उसकी दी हुई तलाक़ वाक़ेअ़ नहीं होती।

(3) दरमियानी दर्जा यह है कि मजनून की तरह तो नहीं हुआ मगर पहले दर्जा से बढ़ गया और हालत यह हो गई कि बग़ैर इरादा मुंह से उल्टी सीधी बातें निकलती हैं, लेकिन जो कुछ बोलता है उसका उसको इल्म व शुऊर होता है। इस सूरत में उसके अक़वाल व अफ़आ़ल पहली सूरत की तरह नाफ़िज़ व मुअ़तबर हैं और उसकी तलाक़ भी वाक़ेअ़ और नाफ़िज़ है।

जबरन तलाक़ लिखवाना

जबरन तलाक़ लिखवाने से तलाक़ वाक़ेअ़ नहीं होती। इसी तरह जबरन तलाक़ नामा पर दस्तख़त करवाने या अंगुठा लगवाने से भी तलाक़ वाक़ेअ़ नहीं होती।

खुला

मसअला(1):

अगर मियाँ-बीवी में किसी तरह निबाह न हो सके और मर्द तलाक़ भी न देता हो तो औरत के लिए जाइज़ है कि कुछ माल देकर या अपना महर देकर मर्द से कहे: ''इतना रूपया ले कर मेरी जान छोड़ दो'' या यूँ कहे: ''जो मेरा महर तेरे ज़िम्मे है उसके बदले मेरी जान छोड़ दो'', उसके जवाब में मर्द कहे: ''मैंने छोड़ दिया'', तो इससे औरत पर एक तलाक़ बाइन पड़ गई। मर्द को इसमें रूजुअ़ का इख़्तियार नहीं, अलबत्ता मर्द ने अगर उसी जगह बैठे बैठे जवाब नहीं दिया बल्कि उस जगह से उठ गया या मर्द तो नहीं उठा औरत उठ गई, फिर मर्द ने कहा अच्छा मैंने छोड़ दिया तो उससे कुछ नहीं हुआ। जवाब व सवाल दोनों एक ही जगह होने चाहिएं। इस तरह निकाह ख़त्म करके जान छुड़ाने को ''खुला'' कहते हैं।

मसअला(2):

मर्द ने कहा: ''मैंने तुझसे खुला किया'' औरत ने कहा: ''मैंने क़ुबूल किया'' तो खुला हो गया, अलबत्ता अगर औरत ने उसी जगह जवाब ना दिया और वहां से उठ गई या औरत ने क़ुबूल ही ना किया तो खुला नहीं हुआ, लेकिन औरत अगर अपनी जगह बैठी रही और मर्द यह कह कर उठ गया और औरत ने उसके उठने के बाद क़ुबूल किया तो खुला हो गया।

मसअला(3):

मर्द ने सिर्फ़ इतना कहा कि मैंने तुझसे खुला किया और औरत ने क़ुबूल कर लिया, रूपये पैसे का ज़िक्र न मर्द ने किया न औरत ने तब भी जो हक़ मर्द का औरत पर और जो हक़ औरत का मर्द पर है, सब माफ़ हो गया, अगर मर्द के ज़िम्मे महर बाक़ी है तो वह भी माफ़ हो गया और अगर औरत महर हासिल कर चुकी है तो उसका वापस करना वाजिब नहीं, अलबत्ता इद्दत के

ख़त्म होने तक रोटी, कपड़ा और रहने का घर देना पड़ेगा, लेकिन अगर औरत ने कह दिया कि इद्दत का रोटी, कपड़ा और रहने का घर मैं तुझसे नहीं लूंगी तो वह भी माफ़ हो गया।

मसअला(4):

अगर उसके साथ कुछ माल का भी ज़िक्र कर दिया, जैसे यूं कहा: ''सौ रूपय के एवज़ मैंने तुझसे खुला किया'' फिर औरत ने क़ुबूल कर लिया तो खुला हो गया। अब औरत के ज़िम्मे सौ रूपय देने वाजिब हो गए। अपना महर ले चुकी तब भी सौ रूपय देने पड़ेंगे और अगर महर अभी तक न लिया हो तब भी देने पड़ेंगे और महर भी नहीं मिलेगा क्योंकि वह खुला की वजह से माफ़ हो गया।

मसअला(5):

खुला मे अगर मर्द का क़ुसूर हो तो मर्द के लिए रूपया व माल लेना या जो महर मर्द के ज़िम्मे है उसके एवज़ में खुला करना बड़ा गुनाह और हराम है और अगर औरत ही का क़ुसूर हो तो जितना महर दिया है उससे ज़ियादा माल नहीं लेना चाहिए, महर ही के एवज़ में खुला कर ले। अगर महर से ज़ियादा ले लिया तो नामुनासिब तो हुआ मगर गुनाह नहीं।

मसअला(6):

औरत खुला करने पर राज़ी नहीं थी मर्द ने उस पर ज़बरदस्ती की और खुला करने पर मजबूर किया यानी मार पीट कर, धमका कर खुला किया तो तलाक़ हो गई लेकिन माल औरत पर वाजिब नहीं हुआ और अगर मर्द के ज़िम्मे महर बाक़ी हो तो वह भी माफ़ नहीं हुआ।

मसअला(7):

यह सब बातें उस वक़्त हैं जब खुला का लफ़्ज़ कहा हो या यूं कहा: ''सौ रूपये पर या हज़ार रूपये के एवज़ में मेरी जान छोड़

दे'' या यूं कहा: ''मेरे महर के एवज़ में मुझे छोड़ दे'' और अगर इस तरह नहीं कहा बल्कि तलाक़ का लफ़्ज़ कहा जैसे यूं कहे: ''सौ रूपये के एवज़ में मुझको तलाक़ देदे तो इसको खुला नहीं कहंगे। अगर मर्द ने उस माल के एवज़ तलाक़ देदी तो एक तलाक़ बाइन पड़ गई और उसमें कोई हक़ माफ़ नहीं हुआ। न वह हक़ माफ़ हुए जो मर्द के ऊपर हैं और न वह जो औरत के ऊपर हैं। मर्द ने अगर महर न दिया हो तो वह भी माफ़ नहीं हुआ, औरत उसकी दावेदार हो सकती है और मर्द ये सौ रूपये औरत से ले लेगा।

मसअला(8):

मर्द ने कहा कि मैंने सौ रूपये के बदले तलाक़ दी तो औरत के क़ुबूल करने पर मौक़ूफ़ है, अगर क़ुबूल न करे तो नहीं पड़ेगी और अगर क़ुबूल कर ले तो एक तलाक़ बाइन पड़ेगी लेकिन जिस जगह मर्द की यह पेशकश सुनी थी, वह जगह बदल जाने के बाद क़ुबूल किया तो तलाक़ नहीं पड़ी।

मसअला(9):

औरत ने कहा मुझे तलाक़ दे दो, मर्द ने कहा तू अपना महर वग़ैरह, अपने सब हक़ूक़ माफ़ कर दे तो तलाक़ दे दुंगा। इस पर औरत ने कहा ''अच्छा मैंने माफ़ किया'' उसके बाद मर्द ने तलाक़ नहीं दी तो कुछ माफ़ नहीं हुआ और अगर उसी मजलिस में तलाक़ दे दी तो माफ़ हो गया।

मसअला(10):

औरत ने कहा: ''तीन सौ रूपये के बदले मुझे तीन तलाक़ें दे दो'', उस पर मर्द ने एक ही तलाक़ दी तो सिर्फ़ एक सौ रूपये मर्द को मिलेंगे और अगर दो तलाकें दीं तो दो सौ रूपये और अगर तीन तलाके दीं तो पूरे तीन सौ रूपये औरत से दिलाए जाएंगे और सब सूरतों में तलाक़ बाइन हो जाएगी, क्योंकि तलाक़ माल के बदले में है।

मसअला(11):

नाबालिग़ लड़का और पागल आदमी अपनी बीवी से खुला नहीं कर सकता।

इद्दत का बयान

मसअला(1):

जब किसी औरत का शौहर तलाक़ दे दे या खुला वग़ैरह से निकाह ख़त्म हो जाए या शौहर मर जाए तो उन सब सूरतों में कुछ मुद्दत तक औरत को एक ही घर में रहना पड़ता है, जब तक यह मुद्दत ख़त्म ने हो जाए उस वक़्त तक कहीं और नहीं जा सकती और न ही किसी और मर्द से निकाह कर सकती है। जब वह मुद्दत पूरी हो जाए तो जहां चाहे निकाह कर सकती है। इस तरह यह मुद्दत गुज़ारने को ‘‘इद्दत’’ कहते हैं।

मसअला(2):

अगर शौहर ने तलाक़ दे दी तो तीन हैज़ आने तक शौहर ही के घर जिसमें तलाक़ दी है बैठी रहे। उस घर से बाहर न निकले, न दिन को न रात को, न किसी दूसरे से निकाह करे। जब पूरे तीन हैज़ ख़त्म हो गए तो इद्दत पूरी हो गई और घर से निकलने और निकाह करने की पाबंदी ख़त्म हो गई। मर्द ने चाहे एक तलाक़ दी हो या दो तीन तलाक़ें दी हों और तलाक़ बाईन दी हो या रजई, सबका एक ही हुक्म है।

मसअला(3):

अगर छोटी लड़की को तलाक़ हो गई जिसको अभी हैज़ नहीं आता या इतनी बुढ़िया है कि अब हैज़ आना बंद हो गया है, इन दोनों की इद्दत तीन महीने है।

मसअला(4):

किसी लड़की को तलाक़ हो गई और उसने महीनों के हिसाब से इद्दत शुरू की, फिर इद्दत के अन्दर ही एक या दो महीने के बाद हैज़ आ गया तो अब पूरे तीन हैज़ आने तक इद्दत गुज़ारे। जब तक तीन हैज़ पूरे न हो इद्दत ख़त्म नहीं होगी।

मसअला(5):

अगर किसी को हमल है और उसी ज़माने में तलाक़ हो गई तो बच्चा पैदा होने तक बैठी रहे, यही उसकी इद्दत है। जब बच्चा पैदा होगा तो इद्दत ख़त्म होगी। तलाक़ के बाद थोड़ी ही देर में अगर बच्चा पैदा हो गया तब भी इद्दत ख़त्म हो गई।

मसअला(6):

अगर किसी ने हैज़ के ज़माने में तलाक़ दे दी तो जिस हैज़ में तलाक़ दी है वह शुमार नहीं होगा, उसके अलावा तीन हैज़ पूरे करे।

मसअला(7):

तलाक़ की इद्दत उसी औरत पर है जिसको सुहबत के बाद तलाक़ हुई हो या सुहबत तो अभी नहीं हुई मगर मियाँ-बीवी में तन्हाई हो चुकी है तब तलाक़ हुई। चाहे ऐसी तन्हाई हुई हो जिस से पूरा महर दिलाया जाता है या ऐसी तनहाई हुई हो जिस से पूरा महर वाजिब नहीं होता। बहरहाल इद्दत गुज़ारना वाजिब है और अगर अभी बिल्कुल किसी क़िस्म की तन्हाई नहीं होने पाई थी कि तलाक़ हो गई तो ऐसी औरत पर इद्दत नहीं।

मसअला(8):

किसी औरत को अपनी बीवी समझ कर ग़लती से सुहबत करली, फिर मालूम हुआ कि वह उसकी बीवी नहीं थी तो उस औरत पर भी इद्दत लाज़िम होगी, जब तक इद्दत ख़त्म न हो उस वक़्त

तक अपने शौहर को भी सुहबत न करने दे, वरना दोनों पर गुनाह होगा। उसकी इद्दत भी वही है जो अभी बयान हुई, अगर उसी दिन हमल हो गया तो बच्चा होने तक इन्तिज़ार करे और इद्दत गुज़ारे। यह बच्चा नाजाइज़ नहीं, उसका नसब ठीक है, जिसने ग़लती से सुहबत की है उसी का बच्चा है।

मसअला(9):

किसी ने निकाह फ़ासिद किया मसलनः किसी औरत से निकाह किया, फिर मालूम हुआ कि उसका शौहर अभी ज़िन्दा है और उसने तलाक़ नहीं दी, या मालूम हुआ कि उस मर्द व औरत ने बचपन में एक ही औरत का दूध पिया है। उसका हुक्म यह है कि अगर मर्द ने उससे सुहबत करली फिर सूरते हाल मालूम होने के बाद जुदाई हो गई तो भी इद्दत गुज़ारना होगी। जिस वक़्त मर्द ने तौबा कर के जुदाई इख़्तियार की उसी वक़्त से इद्दत शुरू हो गई और अगर अभी सुहबत नहीं हुई थी तो इद्दत वाजिब नहीं बल्कि ऐसी औरत से अगर तन्हाई भी हो चुकी हो तब भी इद्दत वाजिब नहीं। इद्दत उसी वक़्त वाजिब होती है जब सुहबत हो चुकी हो।

मसअला(10):

इद्दत के अन्दर खाना पीना, कपड़ा उसी मर्द के ज़िम्मे वाजिब है जिसने तलाक़ दी।

मसअला(11):

किसी ने अपनी बीवी को तलाक़े बाईन दी, या तीन तलाकें दे दीं, फिर इद्दत के अन्दर ग़ल्ती से उससे सुहबत कर ली तो उस सुहबत की वजह से एक और इद्दत वाजिब हो गई, अब तीन हैज़ और पूरे करे। जब तीन हैज़ गुज़र जाएंगे तो दोनों इद्दतें ख़त्म हो जाएंगी।

मसअला(12):

मर्द ने तलाक़े बाइन दी है और जिस घर में औरत इद्दत गुज़ार रही है मर्द भी उसी में रहता है तो ख़ूब अच्छी तरह पर्दे का एहतिमाम करे।

मौत की इद्दत

मसअला(13):

किसी का शौहर मर गया तो वह चार महीने और दस दिन तक इद्दत गुज़ारे, शौहर के मरते वक़्त जिस घर में रहती थी उसी घर में रहना चाहिए, बाहर निकलना दुरूस्त नहीं, अलबत्ता अगर कोई ग़रीब औरत है जिसके पास गुज़ारे के जितना भी ख़र्च नहीं उसने खाना पकाने वग़ैरह की नौकरी कर ली तो उसके लिए घर से बाहर निकलना दुरूस्त है लेकिन रात को अपने घर ही में रहा करे। चाहे सुहबत हो चुकी हो या न हुई हो और चाहे किसी क़िस्म की तन्हाई हुई हो या न और चाहे हैज़ आता हो या न, सब का एक ही हुक्म है कि चार महीने दस दिन इद्दत गुज़ारना चाहिए, अलबत्ता अगर वह औरत हामिला थी उस हालत में शौहर की वफ़ात हुई तो बच्चा पैदा होने तक इद्दत गुज़ारे, अब महीनों का एतिबार नहीं, अगर शौहर के मरने के कुछ ही देर बाद बच्चा पैदा हो गया तो भी इद्दत ख़त्म हो गई।

मसअला(14):

पूरे घर में जहां जी चाहे रहे। यह जो रिवाज है कि एक ख़ास जगह मुकर्रर करके रहती हैं कि ग़मज़दह की चारपाई और ख़ुद ग़मज़दह वहां से हिल नहीं पाती यह बिल्कुल मुहमल और फ़ुज़ूल बात है, इसको छोड़ देना चाहिए।

मसअला(15):

अगर किसी का शौहर चांद की पहली तारीख़ को फ़ौत हुआ और औरत को हमल नहीं तो चांद के हिसाब से चार महीने दस दिन पूरे करे और अगर पहली तारीख़ को फ़ौत नहीं हुआ तो हर महीना तीस तीस दिन का शुमार करके चार महीने दस दिन पूरे करने चाहिएं और तलाक़ की इद्दत का भी यही हुक्म है कि अगर हैज़ नहीं आता, न हमल है और चांद की पहली तारीख़ को तलाक़ हो गई तो चांद के हिसाब से तीन महीने पूरे कर ले, चाहे उन्तीस का चांद हो चाहे तीस का और अगर पहली तारीख़ को तलाक़ नहीं हुई तो हर महीना तीस तीस दिन का लगा कर तीन महीने पूरे करे।

मसअला(16):

किसी ने निकाह फ़ासिद किया था, मसलन बग़ैर गवाहों के निकाह कर लिया या बीवी निकाह में थी और उसकी बहन से निकाह कर लिया, फिर वह शौहर मर गया तो फिर ऐसी औरत जिसका निकाह सही नहीं हुआ, मर्द के मरने पर चार महीने दस दिन इद्दत न गुज़ारे बल्कि तीन हैज़ तक इद्दत गुज़ारे। हैज़ न आता हो तो तीन महीने गुज़ारे और हमल से हो तो बच्चा पैदा होने तक इद्दत गुज़ारे।

मसअला(17):

किसी ने अपनी बीमारी में तलाक़े बाइन दे दी और तलाक़ की इद्दत अभी पूरी नहीं होने पाई थी कि वह मर गया तो देखा जाएगा कि तलाक़ की इद्दत गुज़ारने में ज़्यादा दिन लगेंगे या मौत की इद्दत पूरी करने में? जिस इद्दत में ज़्यादा दिन लगेंगे वह इद्दत पूरी करे और अगर बीमारी में तलाक़ रजई दी है और अभी तलाक़ की इद्दत नहीं गुज़री थी कि शौहर मर गया तो उस औरत पर वफ़ात की इद्दत लाज़िम है।

मसअला(18):

किसी का शौहर मर गया मगर उसकी ख़बर नहीं मिली, चार महीने दस दिन गुज़र जाने के बाद ख़बर आई तो उसकी इद्दत पूरी हो चुकी। जब से ख़बर मिली है तब से इद्दत गुज़ारना ज़रूरी नहीं। इसी तरह अगर शौहर ने तलाक़ दे दी मगर औरत को पता नहीं चला, कुछ दिनों के बाद ख़बर मिली और जितनी इद्दत उसके ज़िम्मे थी वह ख़बर मिलने से पहले ही गुज़र चुकी थी तो उसकी भी इद्दत पूरी हो गई। ख़बर मिलने के बाद इद्दत गुज़ारना वाजिब नहीं।

मसअला(19):

किसी काम के लिए घर से बाहर गई थी कि अचानक उसका शौहर मर गया तो फ़ौरन वहां से चली आए और जिस घर में रहती थी उसी में रहे।

मसअला(20):

वफ़ात की इद्दत में औरत को रोटी, कपड़ा नहीं दिलाया जाएगा। अपने पास से ख़र्च करे।

मसअला(21):

बाज़ जगह दस्तूर है कि शौहर के मरने के बाद साल भर तक इद्दत के तौर पर बैठी रहती है, यह बिल्कुल हराम है।

इद्दत के दौरान सोग

मसअला(22):

जिस औरत को तलाके़ रजई मिली है उसकी इद्दत तो सिर्फ़ यही है कि इतनी मुद्दत तक घर से बाहर न निकले और न किसी और मर्द से निकाह करे। उसके लिए बनाव सिंगार वगै़रह दुरूस्त है और जिसको तीन तलाकें़ मिल गईं या एक तलाक़ बाईन मिली या और किसी तरह से निकाह टूट गया या शौहर फ़ौत हो गया। इन सब सूरतों का हुक्म यह है कि जब तक इद्दत में रहे तब तक न तो घर से बाहर निकले न दूसरा निकाह करे न बनाव सिंगार करे, यह सब बातें उस पर हराम हैं। उस सिंगार न करने को ''सोग'' (इद्दत गुज़ारना) कहते हैं।

मसअला(23):

जब तक इद्दत ख़त्म न हो तब तक ख़ुशबू लगाना, ज़ेवर पहनना, फूल पहनना, सुरमा लगाना, पान खाकर मुंह लाल करना, मिस्सी मलना, सर में तेल डालना, कंघी करना, मेंहदी लगाना, अच्छे कपड़े पहनना, रेशमी और रंगे हुए भड़कीले कपड़े पहनना, यह सब बातें उस पर हराम हैं। अलबत्ता अगर भड़कीले न हों तो दुरूस्त है चाहे जैसा रंग हो, मतलब यह कि ज़ेब वज़ीनत का कपड़ा न हो।

मसअला(24):

सर में दर्द होने की वजह से तेल डालने की ज़रूरत पड़े तो जिस तेल में ख़ुशबू न हो वह डालना दुरूस्त है, इसी तरह ज़रूरत के वक़्त बतौर दवा के सुरमा लगाना भी दुरूस्त है लेकिन रात को लगाकर दिन को साफ़ कर ले। सर धोना और नहाना भी दुरूस्त है, ज़रूरत के वक़्त कंघी करना भी दुरूस्त है लेकिन बारीक कंघी से कंघी न करे जिसमें बाल चिकने हो जाते हैं बल्कि मोटे दन्दाने वाली कंघी करे ताकि ख़ूबसूरती न आने पाए।

मसअला(25):

सोग करना उस औरत पर वाजिब है जो बालिग़ हो, नाबालिग़ लड़की पर वाजिब नहीं, उसके लिए यह सब बातें दुरूस्त हैं। अल्बत्ता घर से निकलना और दूसरा निकाह करना उसके लिए भी दुरूस्त नहीं।

मसअला(26):

जिसका निकाह सही नहीं हुआ था वह तोड़ दिया गया या मर्द मर गया तो ऐसी औरत पर भी सोग करना वाजिब नहीं।

मसअला(27):

शौहर के अलावा किसी और के मरने पर सोग करना दुरूस्त नहीं अलबत्ता अगर शौहर मना न करे तो अपने अज़ीज़ और रिश्तेदार के मरने पर भी तीन दिन तक बनाव सिंगार छोड़ देना दुरूस्त है, उससे ज़ियादा बिल्कुल हराम है और अगर शौहर मना करे तो तीन दिन भी न छोड़े।

सफ़र में इद्दत शुरू हो जाना

अगर कोई औरत अपने शौहर के साथ अपने शौहर के आबाई शहर के अलावा किसी दूसरी जगह मुक़ीम हो और शौहर का वहीं इन्तिक़ाल हो जाए तो अगर शौहर का आबाई शहर जाए इक़ामत से मसाफ़ते सफ़र से कम हो तो बीवी वहां आ कर इद्दत गुज़ारे और अगर मसाफ़ते सफ़र से ज़ियादा हो जाए तो इक़ामत ही में इद्दत पूरी करे।

इद्दत के दौरान सफ़र करना

शौहर की वफ़ात के वक़्त औरत जिस घर में रिहाइश पज़ीर हो, शदीद मजबूरी के बग़ैर उस घर से निकलना जाइज़ नहीं। अलबत्ता अपने मआ़शाी निज़ाम के लिए औरत दिन में या रात के कुछ हिस्से में अपने घर से निकल सकती है, मगर उसके लिए सफ़र शरई की मिक़दार (78 कि0मी0) तक दूर जाना जाइज़ नहीं।

इद्दत में सफ़र हज

इद्दत के अन्दर सफ़र करना जाइज़ नहीं, चाहे हज का सफ़र हो या किसी और मक़सद के लिए।

इद्दत में इलाज के लिए निकलना

इलाज मुआ़लिजा के लिए निकलना जाइज़ है। क्योंकि यह ज़रूरत में दाख़िल है।

परवरिश का हक़

मसअला(1):

मियाँ–बीवी में जुदाई हो गई और औरत की गोद में बच्चा है तो उसकी परवरिश का हक़ माँ को है, बाप उसको नहीं छीन सकता लेकिन बच्चे का सारा ख़र्च बाप ही को देना पड़ेगा। अगर माँ ख़ुद परवरिश न करे, बाप के हवाले कर दे तो बाप को लेना पड़ेगा, औरत को ज़बरदस्ती नहीं दे सकता।

मसअला(2):

अगर माँ न हो या हो और उस ने बच्चे को लेने से इन्कार कर दिया तो परवरिश का हक़ नानी और परनानी को है उसके बाद दादी और परदादी। यह भी न हों तो सगी बहनों का हक़ है कि वह अपने भाई की परवरिश करें, सगी बहनें न हों तो सौतेली बहनें। माँ शरीक बहनों का हक़ बाप शरीक बहनों से पहले है फिर ख़ाला फिर फूफी का।

मसअला(3):

अगर माँ ने किसी ऐसे मर्द से निकाह कर लिया जो बच्चे का महरम रिश्तेदार नहीं तो अब उसको बच्चे की परवरिश का हक़ नहीं रहा, अलबत्ता अगर बच्चा के महरम रिश्तेदार से निकाह किया, जैसेः उसके चचा से निकाह कर लिया या ऐसा ही कोई और रिश्तेदार हो तो माँ का हक़ बाक़ी है, माँ के सिवा कोई और औरत जैसे बहन, ख़ाला वग़ैरह किसी ग़ैर महरम मर्द से निकाह करले तो उसका भी यही हुक्म है कि अब उसको बच्चे की परवरिश का हक़ नहीं रहा।

मसअला(4):

औरत का हक़ बच्चे के ग़ैर महरम से निकाह की वजह से ख़त्म हो गया था लेकिन फिर उस मर्द ने तलाक़ दी, या इन्तिक़ाल कर

गया तो अब फिर उसका हक़ लौट आएगा और बच्चा उसके हवाले कर दिया जाएगा।

मसअला(5):

बच्चे के रिश्तेदारों में से अगर कोई औरत बच्चे की परवरिश के लिए न मिले तो फिर बाप ज़ियादा मुस्तहिक़ है, फिर दादा वग़ैरह, इसी तरतीब से जो हम निकाह के वली के बयान में ज़िक्र कर चुके हैं लेकिन अगर नामहरम रिश्तेदार हो और बच्चा उसे देने में आइन्दा चलकर किसी ख़राबी का अन्देशा हो तो इस सूरत में ऐसे शख़्स के सुपुर्द करेंगे जिस पर हर तरह से इतमिनान हो।

परवरिश की मुद्दत

मसअला(6):

लड़का जब तक सात साल का न हो तब तक उसकी परवरिश का हक़ रहता है, जब सात साल का हो गया तो अब बाप उसको ज़बरदस्ती ले सकता है और लड़की की परवरिश का हक़ नौ साल तक रहता है। जब नौ साल की हो गई तो बाप ले सकता है।

नफ़क़ा का बयान

(ख़ोराक, पोशाक, रिहाइश)

मसअला(1):

बीवी का नान नफ़क़ा (रोटी,कपड़ा) शौहर के ज़िम्मे वाजिब है। औरत चाहे कितनी माल दार हो मगर ख़र्च मर्द ही के ज़िम्मे है और रहने के लिए घर देना भी मर्द के ज़िम्मे है।

मसअला(2):

निकाह हो गया लेकिन रूख़सती नहीं हुइ तब भी औरत नफ़क़ा की हक़दार है अलबत्ता अगर मर्द ने रूख़सती कराना चाहा फिर भी रूख़सती नहीं हुई तो नफ़क़ा की हक़दार नहीं।

मसअला(3):

जितना महर (रूख़सती से) पहले देने का रिवाज है वह मर्द ने नहीं दिया इसलिए वह मर्द के घर नहीं जाती तो उसको नान नफ़क़ा दिलाया जाएगा और अगर बिला वजह मर्द के घर न जाती हो तो नफ़क़ा की हक़दार नहीं, जिस वक़्त जाएगी तब से दिलाया जाएगा।

मसअला(4):

जितनी मुद्दत तक शौहर की इजाज़त से माँ बाप के घर रहे उतनी मुद्दत का नफ़क़ा भी मर्द से ले सकती है।

मसअला(5):

औरत बीमार हो गई तो बीमारी के ज़माने की नफ़क़ा की हक़ दार है, चाहे मर्द के घर में बीमार हो चाहे अपने मैके में, लेकिन अगर बीमारी की हालत में मर्द ने बुलाया फिर भी नहीं आई तो अब नफ़क़ा की हक़दार नहीं रही और बीमारी की हालत में सिर्फ़ नफ़क़ा का ख़र्च मिलेगा। दवा और इलाज का ख़र्च मर्द के ज़िम्मे वाजिब नहीं। अगर दे दे तो उसका हुस्न अख़लाक़ है।

मसअला(6):

औरत हज करने गई तो उतने ज़माने का नान नफ़क़ा मर्द के ज़िम्मे नहीं। अलबत्ता अगर शौहर भी साथ हो तो उस ज़माने का ख़र्च भी मिलेगा। लेकिन रोटी, कपड़े का जितना ख़र्च घर में मिलता था उतने ही की मुस्तहक़ है। जो कुछ ज़ियादा लगे वह अपने पास से ख़र्च करे और रेल जहाज़ वग़ैरह का किराया भी मर्द के ज़िम्मे नहीं।

मसअला(7):

रोटी, कपड़े में दोनों की रिआ़यत की जाएगी। अगर दोनों माल दार हों तो मालदारों वाला मिलेगा अगर दोनों ग़रीब हैं तो ग़रीबों की तरह और मर्द ग़रीब हो और औरत मालदार या औरत ग़रीब हो मर्द मालदार तो ऐसा ख़र्चा दे कि मालदारों से कम हो और ग़रीबों से ज़ियादा हो।

मसअला(8):

औरत अगर बीमार है और घरेलू काम नहीं कर सकती या ऐसे बड़े घराने की है कि अपने हाथ से पीसने, कूटने, खाना पकाने का काम नहीं करती बल्कि उसको ऐब समझती है तो पका पकाया खाना दिया जाएगा और अगर दोनों बातों में से कोई बात न हो तो घर का सब कामकाज अपने हाथ से करना वाजिब है। यह सब काम ख़ुद करे, मर्द के ज़िम्मे सिर्फ़ इतना है कि खाने पीने का तमाम ज़रूरी सामान और बर्तन वग़ैरह ला दे, वह अपने हाथ से पकाए और खाए।

मसअला(9):

दाई, नर्स या लेडी डाक्टर की उजरत उस पर है जिस ने उसे बुलाया। मर्द ने बुलाया तो मर्द पर औरत ने बुलाया तो औरत पर और अगर बिन बुलाए आगई तो मर्द पर।

मसअला(10):

रोटी कपड़े का ख़र्च एक साल का या उससे कुछ कम या ज़ियादा पेशगी दे दिया तो अब उसमें से कुछ लौटाया नहीं जा सकता।

मसअला(11):

बीवी इतनी कम उम्र है कि सुहबत के क़ाबिल नहीं तो अगर मर्द ने कामकाज के लिए या दिल बहलाने के लिए उसको अपने घर में रख लिया तो उसका रोटी, कपड़ा मर्द के ज़िम्मे वाजिब है और अगर अपने पास नहीं रखा बल्कि मैके भेज दिया तो वाजिब नहीं और अगर शौहर नाबालिग़ हो लेकिन औरत बड़ी है तो उसे नान नफ़क़ा मिलेगा।

बीवी की रिहाइश

मसअला(1):

मर्द के ज़िम्मे यह भी वाजिब है कि बीवी के रहने के लिए कोई ऐसी जगह दे जिसमें शौहर का कोई रिश्तेदार न रहता हो, बल्कि ख़ाली हो ताकि मियाँ-बीवी बिल्कुल बेतकल्लुफ़ी से रह सकें, अलबत्ता अगर औरत ख़ुद सब के साथ रहना गवारा करे तो दूसरों के साथ एक घर में भी रहना दुरूस्त है।

मसअला(2):

घर में से एक कमरा औरत के लिए अलग कर दे ताकि वह अपना घरेलू सामान उसमें हिफ़ाज़त से रखे और ख़ुद उसमें रहे और उसका ताला चाबी अपने पास रखे, किसी और का उस में दख़ल न हो, सिर्फ़ औरत ही के क़बज़े में रहे तो बस हक़ अदा हो गया, औरत को इससे ज़्यादा का हक़ नहीं, यह नहीं कह सकती कि पूरा घर मेरे लिए अलग कर दो।

मसअला(3):

जिस तरह औरत को इख़्तियार है कि अपने लिए अलग घर मांगे जिस में मर्द का कोई रिश्तेदार न रहे उसी तरह मर्द को इख़्तियार है कि जिस घर में औरत रहती है वहां उसके रिश्तेदारों को न आने दे, न माँ को, न बाप को, न भाई को न किसी और रिश्तेदार को।

मसअला(4):

औरत अपने माँ-बाप को देखने के लिए हफ़्ते में एक दफ़ा जा सकती है और माँ-बाप के सिवा दूसरे रिश्तेदारों के लिए साल भर में एक दफ़ा से ज़ियादा का इख़्तियार नहीं। इसी तरह उसके माँ-बाप भी हफ़्ते में सिर्फ़ एक मर्तबा उसके पास आ सकते हैं। मर्द को इख़्तियार है कि उससे ज़्यादा जल्दी जल्दी न आने दे और माँ-बाप के सिवा दीगर रिश्तेदार साल भर में सिर्फ़ एक दफ़ा आ सकते हैं, इससे ज़्यादा आने का इख़्तियार नहीं लेकिन मर्द

का इख़्तियार है कि ज़्यादा देर न ठहरने दे, न माँ-बाप को न किसी और को, हाँ! वह इजाज़त दे और राज़ी हो तो कोई हद मुकर्रर नहीं। जब चाहें आ जा सकते हैं। जानना चाहिए कि रिश्तेदारों से मुराद वह रिश्तेदार हैं जिनसे निकाह हमेशा हमेशा के लिए हराम है और जो ऐसे नहों वह अजनबी हैं।

मसअला(5):

अगर बाप बहुत ज़ियादा बीमार है और उसकी कोई ख़बर लेने वाला नहीं तो ज़रूरत के मुताबिक़ वहाँ रोज़ जाया करे। अगर बाप बे दीन और काफ़िर हो तब भी यही हुक्म है बल्कि अगर शौहर मना करे तब भी जाना चाहिए, लेकिन शौहर के मना करने पर जाने से नान नफ़का का हक़ नहीं रहेगा।

मसअला(6):

ग़ैर लोगों के घर नहीं जाना चाहिए, अगर शादी बियाह वग़ैरह की कोई मुरव्वजह महफ़िल हो (जिसमें गुनाह के काम होते हैं) और शौहर इजाज़त भी दे दे तो भी जाना दुरूस्त नहीं। शौहर इजाज़त देगा तो वह भी गुनहगार होगा बल्कि (ग़ैर शरई उमूर पर मुशतमिल) तक़रीबात के दौरान अपने महरम रिश्तेदार के यहां जाना भी दुरूस्त नहीं।

मसअला(7):

जिस औरत को तलाक़ मिल गई वह भी इद्दत पूरी होने तक रोटी, कपड़े और रहने के घर की मुस्तहिक़ है, अलबत्ता जिस का ख़ाविन्द मर गया उसको रोटी, कपड़ा और घर मिलने का हक़ नहीं, मगर उसको मीरास में हिस्सा मिलेगा।

मसअला(8):

अगर निकाह औरत ही की वजह से टूटा जैसे: ख़ुदा न ख़्वास्ता मुरतद हो कर इस्लाम से फिर गई, इसलिए निकाह टूट गया तो इस सूरत में इद्दत के अन्दर उसको रोटी, कपड़ा नहीं मिलेगा, अलबत्ता रहने का घर मिलेगा। अगर वह ख़ुद ही चली जाए तो और बात है, फिर नही दिया जाएगा।

✡✡✡